सम्म-वियारो

[सम्यक्-विचार]

:: सूत्रकार ::

पट्टाचार्य 108 श्री विशुद्धसागर जी यतिराज

:: प्राकृतानुवाद ::

श्रुतप्रिय श्रमणरत्न 108 श्री अप्रमितसागर जी

:: प्रकाशक ::

समर्पण समूह

जैनं वचनं सदा वंदे

आशीषानुकंपा	:	गणाचार्य 108 श्री विरागसागर जी यतिराज
सूत्रकार	:	पट्टाचार्य 108 श्री विशुद्धसागर जी यतिराज
ग्रन्थ	:	सम्म-वियारो [सम्यक्-विचार]
प्राकृतानुवाद	:	श्रुतप्रिय श्रमणरत्न श्री अप्रमितसागर जी मुनिराज
संपादन	:	श्रुतसंवेगी महाश्रमण श्री आदित्यसागर जी मुनिराज
पूर्णावलोकन	:	सहजानंदी श्रमणरत्न श्री सहजसागर जी मुनिराज
संस्करण	:	प्रथम : 1008 प्रति / 2025
प्रकाशन	:	समर्पण समूह, भारत
एवं प्राप्ति स्थान	:	सागर – 97552-86521
		भोपाल – 91790-50222
		जबलपुर – 98276-07171
		इन्दौर – 98260-10104
		इन्दौर – 94253-16840
		भीलवाड़ा – 63766-49881

मुद्रक	:	गुरु आशीष ग्राफिक्स
		अंकित जैन शास्त्री, मड़देवरा, सागर
		मो. : 9755286521, 8302070717

शुभाशीष

सर्वलोक का नेत्र सत्यार्थ तत्त्व बोधक आगम है, जो कि लोकालोक का प्रकाशक है। बिना आगम ज्ञान के जीवन अंधकारमय है। संपूर्ण विश्व परिवर्तन की क्षमता ग्रंथों में होती है। विचारों की दशा को समीचीन मार्ग दिखाने वाला कोई है तो वह सत्यार्थ बोध है। जिसके लिये रहस्यमय गुण पूर्ण गूढ़ साहित्य की अनिवार्यता है।

इस भाव से **''सम्यक् विचार''** एवं **''अमृतबिंदु''** कृति का सृजन किया। साथ ही **''सम्यक् नीति काव्य''** ये तीनों ही कृतियाँ हैं। बालकों से वृद्धों को पठनीय हैं। ज्ञान पिपासु भव्यों को पल-पल में इनका पठन-पाठन करना चाहिये। संसार का सर्वश्रेष्ठ शौक अध्ययन है। अध्ययनशील व्यक्ति गूढ़ आनंद का अनुभव है।

आचार्य गुरुवर विरागसागर जी की भावना मूर्ति रूप दृष्टिगोचर हो रही है। उन्होंने कहा था सोनागिर सिद्धक्षेत्र मध्यप्रदेश के मार्ग में—**'मेरा भाव है एक दिन ऐसा होगा क्षुल्लक यशोधरसागर जी जब संपूर्ण देश हमारे शिष्य प्रशिष्य स्याद्वाद, अनेकांत वाणी का शंखनाद करेंगे और आगमों पर गूढ़ लेखनी भी चलायेंगे।' वह दिख रहा है।**

उनके शिष्यगण एवं प्रशिष्य नवीन-नवीन कृतियाँ विश्ववसुंधरा को प्रदान कर रहे हैं। प्रसन्नता का विषय है—**अंतेवासिन् श्रुत एवं संघ धर्म धर्मात्मा के प्रति संवेग भावयुक्त, वैयावृत्ति में कुशल, श्रमण मुनि श्री अप्रमित सागर जी ने अपनी प्रज्ञा एवं लेखनी से ''सम्यक् विचार'' नीति ग्रंथ को विश्व प्रसिद्ध प्राचीन भाषा प्राकृत भाषा में अनुवाद कर प्राकृत वाङ्मय की वृद्धि की है।**

वे इसी प्रकार से लघुकाय-दीर्घकाय ग्रंथों का प्राकृत में अनुवाद करते रहें। भाषा एवं सिद्धांतों का संरक्षण एवं संवर्धन करते रहें। ऐसे सुधी श्रमणों के लिये सभी को उत्साहशक्ति प्रदान करनी चाहिये। लेखक भारत का भूषण है। उन्हें मंगलाशीष। इसीप्रकार से जिनवाणी की सेवा करते रहें।

।। ॐ नमः सिद्धेभ्यः ।।

मंगलविहार **पट्टाचार्य विशुद्धसागर मुनि**
ऊन प्रवास की ओर
27 मार्च 2025
महाराष्ट्र, भारत

मंगलभावना

श्रमण संस्कृति में जैन तत्त्व-वाङ्मय विभिन्न प्रमेयों में समुपलब्ध है। इसमें कहीं सिद्धान्त, नय, न्याय, अध्यात्म, भक्ति आदि का विषय दृश्यमान होता है, तो कहीं व्याकरण, छन्द, अलंकार, वास्तु, ज्योतिष, नीति, आचरण आदि विषयक तत्त्व दृश्यमान होते हैं।

प्राकृत भाषा में लिखा गया जैन तत्त्व-वाङ्मय अत्यन्त विशाल तथा गम्भीर है। पूर्वाचार्यों ने अपने शुभोपयोग के बहूपयोगी स्वसमय को व्यय करके हमें तत्त्वज्ञान प्रदान किया है।

इसी सुमंगल परंपरा को वर्तमान में वर्धमान एवं जयवंत कर रहे हैं, **कलिकाल के वर्धमान शताब्दी देशनाचार्य, अभिजात-जैनाचार्य पूज्यपाद गुरुदेव भगवन् पट्टाचार्य विशुद्धसागर जी के प्रियाग्र ममानुज श्रुतसंवर्धक श्रुतश्रमी श्रुतप्रिय श्रमणरत्न अप्रमितसागर जी। मुनि श्री दीर्घ तपस्वी हैं, आशु कवि हैं, कोकिलाकंठ हैं, बहुश्रुतज्ञ हैं तथा श्रुतसेवा के लिये सहस्त्र प्रतिशत उद्यम कर रहे हैं।**

इसी ही सुमंगल परिणति का प्रतिफल है कि—यह **''सम्यक्-विचार''** कृति जो कि स्वयं गुरुदेव कृत है। इस कृति का प्राकृतानुवाद करके मुनि श्री अप्रमितसागर जी ने जिनशासन नमोस्तुशासन का तथा जिनवाग्वादिनी का अभिवर्धन किया है।

ये मेरा सौभाग्य रहा कि—मुझे इस लघुकाय महत्प्रमेय युत ग्रन्थ का अवलोकन एवं संपादन करने का सु-अवसर प्राप्त हुआ। **गुरुदेव के प्रिय एवं सर्वजनप्रसिद्ध, ममानुज श्रुतप्रिय श्रमण ऐसे ही जिनवाणी की सेवा निस्स्वार्थभाव से करते रहें।**

।। णमो णमो सिद्ध साहूणं ।।

31/3/2025
गुरुदेव के 18 वें
आचार्य पदारोहण दिवस पर
इंदौर

विशुद्धपदाकांक्षी
श्रुतसंवेगी महाश्रमण आदित्यसागर

मेरी सम्यक् भावना

भारतीय श्रमण संस्कृति की परंपरा में अनेकानेक श्रमणराज हुये जिन्होंने अपने समीचीन विचार जिनागम के अनुसार प्ररूपित कर स्व पर के हितार्थ का अन्वेषण किया। **वास्तविकता में वही विचार जिनागम से सम्यक् विचार कह जाते हैं जो स्वयं के साथ दूसरों के दुःख से दूर कर स्वात्म सुख की ओर पहुँचाने का कार्य करें।**

इसी मंगलोत्तम उद्देश्य को ध्यान में रखते हुये **मेरे परम श्रद्धा के केन्द्र, आराधनीय, पूज्यनीय भव्यवत्सल भाव से संयुजित, सबके हृदय कमल पर भगवान की तरह ही विराजमान रहने वाले, पट्टाचार्य गुरुवर १०८ श्री विशुद्धसागर जी महाराज ने** अपने समीचीन विचार अपनी श्रुत साधना से भव्य जीवों के हितार्थ **''सम्यक्-विचार''** प्ररूपित किये हैं; जिससे भव्यात्माएँ अपने विचारों को समीचीनता प्रदान कर सकें।

इस कृति को **प्राकृतमार्तंड, प्राकृतविद्या व्यसनी, प्राकृतविद्या प्रदाता, सर्वजन हितैषी साधक, श्रुतसंवेगी महाश्रमण १०८ श्री आदित्यसागर जी महाराज ने** संपादित करके और भी महनीयता प्रदान की है।

मेरा अहो! अहो! अहो! सौभाग्य रहा कि— **मुझ लघुश्रमण अल्पश्रुतधी को जैनदर्शन की प्राकृत भाषा में इस अमूल्यनीय कृति का प्राकृत में अनुवाद करने का अवसर प्रदान किया गया।**

अंत में यही भावना है कि—जैसे-जैसे अज्ञान हटता है, वैसे-वैसे ज्ञान बढ़ता है; मैं भी अपना संपूर्ण अज्ञान हटाकर कैवल्य ज्ञान को प्राप्त करूँ।।

।। विशुद्धात्मने नमः ।।

आचार्य पदारोहण दिवस
31 मार्च 2025
इंदौर (म.प्र.), भारत।

विशुद्धगुणाकांक्षी
श्रुतप्रिय श्रमण अप्रमितसागर

मंगलाचरणं

दंसण-णाण-चरित्तं, लद्धीए अप्प-अधम्मखयट्ठं ।
वुच्चं सम्मवियारं, जं लिहिदं विसुद्धदेवेण ।।

अर्थ—दर्शन, ज्ञान और चरित्र को प्राप्त करने के लिए आत्मा से अधर्म का क्षय करने के लिए मैं (श्रुतप्रिय अप्रमित सागर) सम्यक् विचार नामक ग्रंथ को कहूँगा । जो श्री विशुद्धसागर गुरुदेव के द्वारा लिखा गया है ।।

सम्यक् विचार - 1

अहो अप्पा! सयल-वेहवाणि विहा वीदरायत्त-समक्खं। सुद्धवियारजुत्त-आयारमेव विसुद्ध-वीदरायत्त-उवलद्धिं कारेदि।।

अहो आत्मन् ! वीतरागता के समक्ष सर्व-ऐश्वर्य व्यर्थ हैं। शुद्ध विचार-युक्त आचार ही विशुद्ध-वीतरागता की उपलब्धि कराते हैं।

सम्यक् विचार - 2

हे णाणी! वीसस्स सयल-धम्म-मूलाधारो अप्पा परमप्पा य। इमाणं जदत्थ बोहणट्ठं आगम-सत्थाणं सम्मज्झयणं आवस्सगं।।

हे ज्ञानी! आत्मा और परमात्मा विश्व के समस्त धर्मों का मूल आधार है। इनके यथार्थ बोध के लिए आगम शास्त्रों का सम्यक्-अध्ययन अनिवार्य है।

सम्यक् विचार - 3

हे मित्त! राय-दोस-मोहादि-विगारा आदस्स पबल-रिऊणो। आदसंतीए जदत्थणाणं कुणेहि सदायरणत्तो जीवणं जीवेहि, परिणामं विसुद्धेहि, सदद सम्म-पुरिसत्थं कुणेहि।।

हे मित्र! आत्मा के सबसे प्रबल शत्रु हैं, राग-द्वेष मोहादि विकार। आत्मशान्ति के लिए यथार्थ ज्ञान प्राप्त करो, सदाचरण पूर्वक जीवन जिओ, परिणाम विशुद्ध रखो, निरन्तर सम्यक् पुरुषार्थ करो।

सम्यक् विचार - 4

अहो अप्पा! जेण्हायार-मूलो अहिंसा। ताए परिपालणं अणेयंत-दिट्ठीए विणा असंभवं। अहिंसा एव धम्मेसुं वरेण्ण धम्मो। समभावो एव अहिंसा।।

अहो आत्मन् ! जैनाचार का मूल अहिंसा है। अहिंसा का परिपालन अनेकान्त-दृष्टि के बिना संभव नहीं है। अहिंसा ही धर्मों में श्रेष्ठ धर्म है। समभाव ही अहिंसा है।

सम्यक् विचार - 5

अहो पण्णप्पा! आदपदीदी आदणाणं आदलीणदा णियाणंदरस-लीणदा खलु सच्चसाहगं संजमाणुट्ठाणादो सासद-संतिं दिंतेदि।।

अहो प्रज्ञात्मन् ! आत्म प्रतीति, आत्मज्ञान, आत्म लीनता निजानन्द रस लीनता ही सच्चे साधक को, संयम-अनुष्ठान पूर्वक शाश्वत शांति प्रदान करती है।

सम्यक् विचार - 6

हे मित्त! अहिणव-अहिणव-वत्थुं अहिणव-अहिणव-रायकारणं। रायो कम्मबंधकारणं। बंधभावादु आदरक्खणं इच्छेहि दु कम्मबंधकारणत्तो आदरक्खणं कुणेहि।।

हे मित्र! अभिनव-अभिनव वस्तु अभिनव-अभिनव राग का कारण है। राग कर्मबंध का कारण है। बंध भाव से आत्म-रक्षा करना है तो कर्मबंध के कारणों से आत्म-रक्षा करो।

सम्यक् विचार - 7

अहो णाणी! सम्मविचारो विसिट्ठ-पुण्ण-पयडि-उदयादो हि लहेदि।।

अहो ज्ञानी! सम्यक् सोच विशिष्ट पुण्य प्रकृति के उदय से ही प्राप्त होता है।

सम्यक् विचार - 8

हे मित्त! बुद्धि-विवेग-इंदिय-समत्थं च जीवणस्स पढसमयादो चरम- समय-पज्जंतं अविरामो गच्छेज्जा, तम्हा संसार-अवत्थाए पुण्ण-सुरक्खणं आवस्सग-अंगं। जह गिहत्थस्स धणसंगहो आवस्सगो, तह पसत्थ-भावा वि आवस्सगा।।

हे मित्र! बुद्धि-विवेक, इन्द्रिय-सामर्थ्य जीवन के प्रथम समय से लेकर अंतिम समय तक अविराम चलता रहे, इसीलिए संसार अवस्था में पुण्य को सुरक्षित करना अनिवार्य अंग है। गृहस्थ के लिए जैसे धन का संग्रह अनिवार्य है, वैसे प्रशस्त परिणाम भी आवश्यक है।

सम्यक् विचार - 9

हे मुमुक्खू! कम्मोदय-सहजो णो, कम्मकिदो; दव्वकम्मबंधादु भयमत्थि दु णोकम्मादो वि भयभीदो हुज्जा। सादा-उदए जं इंदियसुहआणंदं तमेव णोकम्मं, कम्मबंधकारणं च। वट्टमाण-असुहभावो भविस्से असुहोदयो होदूणं आगच्छेहिदि।।

हे मुमुक्षु! कर्मोदय सहज नहीं कर्मकृत है; द्रव्यकर्म बंध से भय है, तो नोकर्मों से भी भयभीत रहो। साता-उदय पर जो इन्द्रिय सुख का आनन्द है वही नोकर्म है, कर्म बंध का कारण है। वर्तमान का अशुभ परिणाम भविष्य में अशुभोदय बनकर आएगा।

सम्यक् विचार - 10

हे णाणी! सच्चत्थ-पबोहो आदुण्णदि-सोवाणं।।

हे ज्ञानी! सत्यार्थ-प्रबोध आत्मोन्नति का सोपान है।

सम्यक् विचार - 11

हे समण! जहा कहणं जाणेसि तहा चलणं पि सुसिक्ख अण्णहा तुवं वीस-अणत्थं अत्तेहिसि। भूदत्थ-वक्खाणेणं सह भूदत्थ-चरियापालणं पि होदव्वं।।

हे श्रमण! जैसा कहना जानते हैं; वैसा चलना भी सीखो, अन्यथा आप विश्व अनास्था को प्राप्त हो जाओगे। भूतार्थ व्याख्यान के साथ भूतार्थ चर्या का भी पालन होना चाहिए।

सम्यक् विचार - 12

हे मित्त! बहि-वेहवस्स मदम्मि मूढो आदवेहवं णो दिस्सेदि य पुण्णस्स असम्म-विवरीद-उवओगं किच्चा भाविपज्जायं किलेसमयं किच्चा दुग्गदि-दुहं भुंजेदि।।

हे मित्र! बाह्य वैभव के मद में अज्ञानी जीव आत्म वैभव को नहीं देखता है और पुण्य का असम्यक् विपरीत प्रयोग करके भविष्य की पर्याय को क्लेशमय बनाकर दुर्गतियों के दु:ख भोगता है।

सम्यक् विचार - 13

हे णाणी! पुण्णसत्ता-रज्जसत्ताए बलम्मि सच्चसत्ता-विणासस्स णो चिंतेहि, जओ समय-परिवट्टणे सदि संसारे कोवि णामं पुक्कवंतो णो मिल्लेदि तहा मिच्चूए सदि कंदमंतो णो मिल्लेदि।।

हे ज्ञानी! पुण्य सत्ता, राज्य सत्ता के बल पर सत्य की सत्ता का नाश करने की नहीं सोचना, क्योंकि समय बदलने पर संसार में कोई नाम लेने वाला नहीं मिलता और मृत्यु होने पर अश्रु बहाने वाला नहीं मिलता है।

सम्यक् विचार - 14

अहो मोक्खत्थी! जिणपवयणं परमकल्लाणकारणं, तम्हा पडिक्खणं सिरि-पवयणं पडि अत्थावंतो होदूण सुणहि तहा चितणं मणणं किच्चा धारेहि।।

अहो मोक्षार्थी! जिन प्रवचन परम कल्याण का कारण है, इसीलिए प्रतिक्षण श्री प्रवचन के प्रति आस्थावान होकर श्रवण करो तथा चिंतन-मनन कर धारण करो।

सम्यक् विचार - 15

हे मित्त! जो सम्ममग्गे गमण-पुरिसत्थं करेदि, सोचेव सच्चत्थबोहफलं लहेदि।।

हे मित्र! जो सम्यक्-मार्ग पर चलने का पुरुषार्थ करता है; वही सत्यार्थ-बोध के फल को प्राप्त होता है।

सम्यक् विचार - 16

अहो मित्त! कम्मबंधो सुहुम-धारा; साहारणजणो इमं ण विजाणेदि, किण्णु सा अत्थि। दूरसंचार-जंत-तरंगाणि णेत्तेहिं णो दिस्संति, किण्णु होंति, एवमेव कम्मबंधविवत्था चक्खुसा णत्थि, णं बंधाभावो णत्थि।।

अहो मित्र! कर्म बंध सूक्ष्म-धारा है; सामान्य व्यक्ति इसे नहीं समझता है, पर वह है। दूर संचार यंत्रों की तरंगें नेत्रों से नहीं दिखतीं, परन्तु होती हैं, इसी प्रकार से कर्म बंध व्यवस्था चाक्षुष नहीं, इसका तात्पर्य बंध का अभाव नहीं है।

सम्यक् विचार - 17

भाउ! सच्चभासणे ईसा माणवं असमत्थं करेदि। ईसालू सच्चं जाणंतं पि णो भासेदि।।

भैया! सत्य कहने में ईर्ष्या व्यक्ति को असमर्थ कर देती है। ईर्ष्यालु सत्य जानते हुए भी कह नहीं सकता है।

सम्यक् विचार - 18

हे णाणी! बुद्धि-समय-विवेग-विसुद्धीओ य रक्खेज्जा। इमाओ
ÛeGj esDeCei IeJeheDees FceeCe ÛeGCnb bGJeueeeeJeenesDeJej - DeeheCesCeesneeb~~

हे ज्ञानी! बुद्धि समय, विवेक एवं विशुद्धि इन चार की रक्षा करना चाहिए। ये चारों अनर्घवान हैं। इन चारों की उपलब्धि विश्व में किसी बाजार में नहीं होती है।

सम्यक् विचार - 19

हे मित्त! सारल्लं जीवण-विगासस्स महामंतं।।

हे मित्र! सरलता जीवन विकास का महामंत्र है।

सम्यक् विचार - 20

अहो णाणी! सम्म-बोहो आदसोहणस्स णिम्मलसाहणं।।

अहो ज्ञानी! सम्यक्-बोध आत्म-शोधन का निर्मल साधन है।

सम्यक् विचार - 21

अहो पण्ण! केणचिद घिणं मा कुण, जओ सव्वाणि दिणादि सदिसाणि णो होंति। घिणा-सक्कारा समाहि-याले कट्ठपदा होहिंति।।

अहे प्रज्ञ! किसी से घृणा मत करो, क्योंकि सबके दिन एक से नहीं होते। घृणा के संस्कार समाधि काल में कष्टप्रद होंगे।

सम्यक् विचार - 22

अहो पण्ण! संति-सक्किदि-रक्खणं पत्तेग-माणवस्स धम्मो।।

अहो प्रज्ञ! शान्ति एवं संस्कृति की रक्षा करना प्रत्येक मानव का धर्म है।

सम्यक् विचार - 23

अहो णाणी! जत्थ संती तत्थेव जीवण-आणंदो। जत्थ असंती तत्थ जीवण-आणंदो णत्थि।।

अहो ज्ञानी! जहाँ शान्ति है; वहीं जीवन का आनन्द है। जहाँ शान्ति नहीं वहाँ जीवन का आनन्द नहीं।

सम्यक् विचार - 24

हे मित्त! सम्मवियारं पि पुण्णोदययाले हि जायंते, पावोदए वियारेसुं पि विगारा जायंते।।

हे मित्र! सम्यक्-विचार भी पुण्योदय के काल में ही आते हैं, पापोदय में विचारों में भी विकार आ जाते हैं।

सम्यक् विचार - 25

अहो अप्पा! तच्चण्णेसी परभावेहिं आदतच्चादो तियाल-भिण्णं हि दिस्सेदि, भिण्णं हि वेदेदि तहा परभावादो रायदोसादो सदा सुरक्खेदि।।

अहो आत्मन् ! तत्त्वान्वेषी पर-भावों से आत्म-तत्त्व को त्रिकाल भिन्न

सम्यक् विचार - 26

अहो साहग! सम्म-समाहिं इच्छेसि दु मायाचारिस्स पुण्ण-परिचागं कुण; मायाचारी समाहीए सत्तु-भावो। विसुद्धी अज्जव-धम्मादो हि संभवा, इमेण विणा समाही असंभवा।।

अहो साधक! सम्यक् समाधि चाहिए तो मायाचारी का पूर्ण परित्याग करो; मायाचारी समाधि के लिए शत्रु भाव है। विशुद्धि आर्जव धर्म से ही सम्भव है, इसके बिना समाधि असम्भव है।

सम्यक् विचार - 27

अहो अप्पा! समीचीगमग्गे गमणं साहुत्तं।।

अहो आत्मन् ! समीचीन मार्ग पर चलना साधुता है।

सम्यक् विचार - 28

हे मित्त! भवणाणि एत्थेव ठिदिस्संति, णस्सेहिंति तम्हा भवणरायम्हि अप्पभावणाओ अविसुद्धाओ णो कुज्जा।।

हे मित्र! भवन यहीं खड़े रह जायेंगे, नष्ट हो जायेंगे, इसीलिए भवनों के राग में अपनी भावनाओं को अविशुद्ध नहीं करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 29

अहो मुमुक्खू! धम्मो धम्मप्पस्स विसिट्ठ-ठाणं; धम्मप्प-अहिणाणं धम्मेणं होदि तहा धम्म-अहिणाणं धम्मप्पेण हि होदि। विणा धम्मेणं धम्मं दिस्सेहिंति वि कत्थ?।।

अहो मुमुक्षु! धर्म धर्मात्मा का विशिष्ट स्थान है; धर्मात्मा की पहचान धर्म से होती है तथा धर्म की पहचान धर्मात्मा के माध्यम से ही होती है। बिना धर्मात्मा के धर्म को देखेंगे भी कहाँ?

सम्यक् विचार - 30

अहो साहग! चाग-उवरंतं गहण-बुद्धी, बंधणादु मुचेदूणं सयं बंधण-लद्ध-अण्ण-पुरिसो व्व।

अहो साधक! त्याग के उपरान्त ग्रहण बुद्धि, बंधन से मुक्त होकर स्वयं बंधन को प्राप्त होने वाले अज्ञ-पुरुष के तुल्य है।

सम्यक् विचार - 31

हे भव्व! सम्मबोहो बोही य पुण्णप्पा हि भजेदि।।

हे भव्य! सम्यक् बोध एवं बोधि पुण्यात्मा जीवों को ही प्राप्त होती है।

सम्यक् विचार - 32

अहो अप्पा! सच्चत्थबोहेण विणा आदसोहो असंभवो।।

अहो आत्मन् ! सत्यार्थ बोध के बिना आत्मशोध असंभव है।

सम्यक् विचार - 33

हे जीव! लोह-हासाणि मिल्लेदूण महाअणत्थगारी-कज्जं कारेंति, फलदो घणघोरमहादुक्खं जीवं पसज्जेदि।।

हे जीव! लोभ एवं हास्य मिलकर महा-अनर्थकारी कार्य करा देते हैं, फलत: घनघोर महा-दु:ख जीव को प्राप्त होता है।

सम्यक् विचार - 34

अहो अप्पा! जीवणे सारल्लं दुल्लहं। सारल्लत्तेण विणा आणंदो असंभवो।।

अहो आत्मन् ! जीवन में सरलता आना दुर्लभ है। सरलता के बिना आनन्द संभव नहीं है।

सम्यक् विचार - 35

अहो साहग! एरिसं वत्थुं सगं समया णो धारेसि ठावेसि; जेण स-पर-तिव्वरागो वड्ढेदि, परस्स चोरिय-परिणामा होतुं। स-पर-अहिदु-दव्वं साहगो णो धारेहि।।

अहो साधक! ऐसी वस्तु अपने पास नहीं रखना; जिसके कारण स्व-पर का तीव्र-राग वर्धमान हो, पर के चोरी के परिणाम हों। स्व-पर अहितकारी द्रव्य को साधक न रखे।

सम्यक् विचार - 36

अहो अप्पा! पुण्णप्पस्स णियोएण सहजेण कज्जसिद्धी होदि।।

अहो आत्मन् ! पुण्यात्मा जीव के नियोग से सहज ही कार्य सिद्धि हो जाती है।

सम्यक् विचार - 37

भो णाणी! भव्वा वरेण्ण-कज्जस्सेव भावो जायदे; ते जदणत्तो सुहद-कज्जेसुं हि जदण-पुरिसत्था करेंति।।

अहो ज्ञानी! भव्यों को श्रेष्ठ कार्य करने का ही भाव आता है; वह प्रयत्न पूर्वक सुखद कार्यों में ही प्रयत्न और पुरुषार्थ करते हैं।

सम्यक् विचार - 38

अहो अप्पा! जसवंतेण सह पवासेणं कज्जाइं जससरूवाइं हि होंति।।

अहो आत्मन् ! यशवान के साथ प्रवास करने से कार्य यशरूप ही होते हैं।

सम्यक् विचार - 39

जो अवर-पाणाणं हरेदि, जसं मइलेदि तस्स सत्ता-सासण-जसं च विणस्सेदि। जो सग-सत्ता-जस-सत्ता-अवेक्खा य पर-पाणाणं रक्खेदि, तस्स सच्च-जस-सत्ता य सुरक्खेदि।।

जो दूसरे के प्राणों का हरण करता है, यश को धूमिल करता है, उसकी सत्ता, शासन और यश चला जाता है। स्व सत्ता यश और सत्ता की अपेक्षा पर के प्राणों को जो रक्षा करता है, उसका सत्य, यश और सत्ता सुरक्षित रहती है।

सम्यक् विचार - 40

अहो णाणी! परकीय-कम्माणं परिवट्टणं तुम्हाण हत्थे णत्थि। तुवं अवराणं वरं वियारेसि, किण्णु ताण वरं हुज्जा अयं णियमो णत्थि।।

अहो ज्ञानी! परकीय कर्मों का हेर-फेर आपके हाथ में नहीं है। आप पर के लिए अच्छा सोच सकते हैं, पर उनका भला हो ही जाय यह नियम नहीं है।

सम्यक् विचार - 41

णाणी! जत्थ धम्मो तत्थेव आदसंती। आदत्थिं पत्तेग-धम्मिग-अणुट्ठाणे आदविसुद्धीए लक्खं कादव्वं।।

ज्ञानी! जहाँ धर्म होता है, वहीं आत्म शान्ति होती है। आत्मार्थी को प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठान में आत्म-विशुद्धि पर लक्ष्य रखना चाहिए।

सम्यक् विचार - 42

अहो मित्त! जस्स कज्ज-करणे आदसंती विणस्सेदि, तं धम्मिग-अणुट्ठाणं पि वालुगा-पीढणमिव विहा।।

अहो मित्र! जिस कार्य के करने पर आत्म शान्ति भंग होती हो, वह धार्मिक अनुष्ठान भी बालु पेलने के तुल्य व्यर्थ है।

सम्यक् विचार - 43

अहो अप्पा! जत्थ वीसबंधुत्तपाढं पाढावेज्जा, तत्थेव धम्मिगत्तं संभवं। जत्थ पाणाणिणो पीडित्ता पाणं हरेज्जा, तत्थ धम्मिगत्तं कत्थ?

अहो आत्मन् ! जहाँ विश्व-बन्धुता का पाठ पढ़ाया जाये वहीं धार्मिकता संभव है। जहाँ प्राणियों को प्रताड़ित कर प्राण हरण किया जाये वहाँ धार्मिकता कहाँ?

सम्यक् विचार - 44

अहो अप्पा! भावेसुं उप्पण्णे उद्देगे णियंतणं विवेगी-चिण्हं च विवरीदताए सिग्घं मुहरिदत्तं अविवेगी-चिण्हं।।

अहो आत्मन् ! भावों में उत्पन्न उद्रेक पर नियंत्रण रखना विवेकी की पहचान है और विपरीतता आने पर शीघ्र मुखरित होना विवेक हीनता का चिह्न है।

सम्यक् विचार - 45

अहो अप्पत्थी! तित्थं आदसंति-ठाणं। भव्वा जगदी-कत्तत्तं मुंचिदूणं, तित्थ-खेत्तेसुं णिवसिदूणं अप्पत्थदा-पुरिसत्थं कादव्वं।।

अहो आत्मार्थी! तीर्थ आत्म शान्ति के स्थान हैं। भव्य जीवों को जगती के कर्तापन को छोड़कर, तीर्थ क्षेत्रों पर प्रवास कर आत्मस्थ होने का पुरुषार्थ करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 46

अहो अप्पा! अप्पसाहगस्स अंतरंगे सम्मवियारा सहजेण जायंते।।

अहो आत्मन् ! आत्म साधक के अंतरंग में सम्यक् विचार सहज ही उत्पन्न होते हैं।

सम्यक् विचार - 47

विवेगिस्स दया कारुण्ण-अहिंसापुण्णा य अविवेगी कारुण्ण-सुण्णो।।

विवेकी की दया करुणा और अहिंसापूर्ण होती है, अविवेकी करुणा शून्य होता है।

सम्यक् विचार - 48

अहो णाणी! सग-सग-कम्म-विवागादो जीवा सुहासुहं च फलेदि। अण्णो कोवि भिण्णपुरिसो अवरं णो सुहदायगो णो दुहदायगो, सो दु णिमित्तमेत्तं।।

अहो ज्ञानी! स्व-स्व कर्म विपाक से जीवों को शुभाशुभ फलित होता है। अन्य कोई भिन्न पुरुष पर को न सुख दाता, न दुःख दाता, वह तो निमित्त मात्र है।

सम्यक् विचार - 49

अहो अप्पा! अग्गी दु देहं भम्हं करेदि, किण्णु ईसा आदविसुद्धिं हरसेदि पज्जालित्तु णट्ठेदि।।

अहो आत्मन्! अग्नि तो शरीर को भस्म करती है, परन्तु ईर्ष्या आत्म-विशुद्धि को घटा देती है, जलाकर नष्ट कर देती है।

सम्यक् विचार - 50

सम्म-पुण्णोदए हि जीवं समीचीणमग्गम्हि गमणभावणा संभवा। पुण्ण-खीणत्त-काले वरेण्णमग्गम्हि गमणभावा वि ण जायंते।।

सम्यक्-पुण्योदय पर ही जीव को समीचीन मार्ग पर चलने की भावना सम्भव है। पुण्य क्षीणता के काल में श्रेष्ठ मार्ग पर चलने के भाव भी उत्पन्न नहीं हो सकते हैं।

सम्यक् विचार - 51

अहो मित्त! आऊ खणे खणे विलीयदि तम्हा खणे खणे सुरक्खित्तु जीवेहि।।

अहो मित्र! आयु क्षण-क्षण में विलीन हो रही है, इसीलिए क्षण-क्षण सँभलकर जीवन जियो।

सम्यक् विचार - 52

अहो मुमुक्खु! आदधम्मो सग-पुरिसत्थेणं पत्तेदि।।

अहो मुमुक्षु! आत्म धर्म स्व-पुरुषार्थ से प्राप्त होता है।

सम्यक् विचार - 53

अहो अप्पा! विसिट्ठ-भग्गोदए हि सम्म-तित्थयर-भगवंताणं एवं तित्थाणं पावण-दंसणं तहा ताण पूयण-अच्चण-अवसरो पापुण्णेदि। भग्गहीणं धम्मप्पा-दंसणं पि दुल्लहं।।

अहो आत्मन् ! विशिष्ट भाग्योदय पर ही सच्चे तीर्थंकर भगवंतों एवं तीर्थ के पावन दर्शन तथा उनकी पूजन अर्चन का अवसर प्राप्त होता है। भाग्यहीन को धर्मात्मा के दर्शन भी दुर्लभ हैं।

सम्यक् विचार - 54

उस्साहसत्ती वीसस्स महासत्ती। उस्साहजुत्तमाणवो सव्व-सफलदाओ पापुण्णेदि।।

उत्साह शक्ति विश्व की महाशक्ति है। उत्साह से युक्त मानव सर्व-सफलताओं को प्राप्त करता है।

सम्यक् विचार - 55

मित्त! सव्वगुणेसुं पहाणो विणयगुणो। विणयसीलो हि विज्जं पत्तेदि य सोचेव अवरा विज्जा-दाणं करेदि। अविणयिं णत्थि विज्जा-लाहो।।

मित्र! सर्वगुणों में प्रधान विनय गुण है। विनयशील ही विद्या प्राप्त कर पाता है और वही दूसरों को विद्या प्रदान कर सकता है। अविनयी को विद्या नहीं मिलती है।

सम्यक् विचार - 56

अहो साहग! आदखेत्त-णिम्मलत्तं साहगं साहणाए उत्तिण्णत्तं जच्छावेदि। आदसरणं हि वरेण्णं।।

अहो साधक! आत्मक्षेत्र की निर्मलता साधक को साधना में उत्तीर्णता प्रदान कराती है। आत्म शरण ही सर्वश्रेष्ठ है।

सम्यक् विचार - 57

अहो अप्पा! आदविसुद्धी सग-पुरिसत्थे हि आधारिदा।।

अहो आत्मन् ! आत्म विशुद्धि स्व-पुरुषार्थ पर ही आधारित होती है।

सम्यक् विचार - 58

हे मित्त! जे सच्चवादी उवहास-उवेक्खा-अणादर-णिंदा-विरोहा य
nenefe, eCeyYeùeesDemeuekeKeheef[JeeJe° efe, lseefej eseefnbefene neceeCeheeeJCeefe~~

हे मित्र! जो सत्यवादी उपहास, उपेक्षा, तिरस्कार, निंदा और विरोध को सहन कर लेते हैं, निडरतापूर्वक अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं, वह विरोधियों से भी सम्मान को प्राप्त होते हैं।

सम्यक् विचार - 59

अहो अप्पा! धेज्ज-आदबलं च सव्वसिद्धि-पदायगं मूलमंतं। आदहिदुं मूलमंत-विराहणं णो कादव्वं।।

अहो आत्मन् ! धैर्य एवं आत्मबल सर्वसिद्धि प्रदायक मूलमंत्र है, आत्म-हितैषी को मूलमंत्र की विराधना नहीं करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 60

हे मुमुक्खु! तच्चरुई भावि-भगवत्तस्स लिंगं। सग-णाण-धाराए णिम्मलदा जीवं भगवत्तं पदाणेदि। गहण-आदणाणेण विणा भगवद-दसा ण पयडेदि ।।

हे मुमुक्षु! तत्त्वरुचि भावि-भगवत्ता का लिङ्ग है। स्व ज्ञान धारा की निर्मलता जीव को भगवत्ता प्रदान कराती है। तलस्पर्शी आत्मज्ञान के बिना भगवत् दशा प्रकट नहीं होती है।

सम्यक् विचार - 61

हे मित्त! परोवएसो कुसलत्त-बुद्धि-वाग-पडुदा-कज्जं, उवएसो अप्पं दिज्जा तदणुसारेण पवित्ति-करणं, पावादो आदरक्खणं अंतोकरणं च विसयो त्थि।।

हे मित्र! परोपदेश कुशलता-बुद्धि वाक्-पटुता का कार्य है, उपदेश स्वयं को देना तदनुसार प्रवृत्ति करना, पापों से आत्म-रक्षा करना अंत:करण का विषय है।

सम्यक् विचार - 62

अहो अप्पा! पुण्णसत्ताए पावं किच्चा; पुण्णखयं णो कुणहि। पत्तेग-सास-रक्खणं कुणेहि, जओ सासणिग्गमणम्हि विलंबं णो होदि।।

अहो आत्मन् ! पुण्य सत्ता में पाप करके; पुण्य का क्षय नहीं कर लेना। श्वास-श्वास की रक्षा करो, क्योंकि श्वास निकलते देर नहीं लगती है।

सम्यक् विचार - 63

अहो अप्पा! उहयलोए सुहलाहत्थं पुरिसत्थं कुणेहि। वट्टमाण-सम्म-पुरिसत्थो हि भविस्से सुहदरूवम्हि फलेहिदि।।

अहो आत्मन् ! उभय लोक में सुख मिले ऐसा पुरुषार्थ करो। वर्तमान का सम्यक्-पुरुषार्थ की भविष्य में सुखद रूप में फलित होगा।

सम्यक् विचार - 64

अहो अप्पा! लिस्सत्तो सुहं मा भुंज, परलोए वि सुहसाहण-सब्भावो हुज्जा, एरिसेण विरत्तभावेण जीवणं जिय य जीवावेहि।।

अहो आत्मन! लिप्सा पूर्वक सुख मत भोगो, परलोक में भी सुख के साधन मिलते रहें ऐसे विरक्त भाव से जीवन जियो और जीने दो।

सम्यक् विचार - 65

अहो अप्पा! तिव्व-पुण्णोदये वट्टमाण-पावाणि ण दिस्संति, किण्णु समयम्हि उदयरूवम्हि उदीरेहिंति।।

अहो आत्मन् ! तीव्र पुण्योदय पर वर्तमान के पाप दृष्टिगोचर नहीं होते, परन्तु समय पर उदय रूप में उपस्थित हो जायेंगे।

सम्यक् विचार - 66

हे मित्त! मणुस्स-जम्मं धारित्तु; जम्म-मरणस्स खय-पुरिसत्थं भव्ववरजीवा हि करेंति। अभव्वं सम्मवियारा णो आगमेंति।।

मित्र! मनुष्य जन्म धारण कर; जन्म मरण के क्षय का पुरुषार्थ भव्यवर जीव ही कर पाते हैं। अभव्य को सम्यक् विचार ही नहीं आते हैं।

सम्यक् विचार - 67

हे णाणी! सव्वणयसमूहो हि लोय-संववहारअवगमणम्हि समत्थो त्थि। एगणएणं वत्थुसिद्धि-ववहार-परमत्थाणं सम्म-विवत्था णवि सिज्झेदि।।

हे ज्ञानी! सर्वनय का समूह ही लोक-संव्यवहार को चलाने में समर्थ है। एक नय से वस्तु सिद्धि, व्यवहार-परमार्थ दोनों की सम्यक्-व्यवस्था नहीं बन सकती है।

सम्यक् विचार - 68

भावविसुद्धी आदसिद्धीए मूलमंतं।।

भाव-विशुद्धि आत्म सिद्धि का मूलमंत्र है।

सम्यक् विचार - 69

अहो मुमुक्खू! इच्छा-अभावे इंदियविसयसेवणं णो होदि।।

अहो मुमुक्षु! इच्छा के अभाव में इन्द्रिय विषय-सेवन नहीं होता है।

सम्यक् विचार - 70

अहो पण्ण! जो सुबुद्धीए आसयेदि, सो कम्म-कलमसादो आदरक्खणं करेदि।।

अहो प्रज्ञ! जो सुबुद्धि का आलम्बन लेता है, वह कर्म-कल्मष से आत्म रक्षा कर लेता है।

सम्यक् विचार - 71

अहो णाणी! जदि सग-परिणामेसुं णियंतणं तु पासादेसुं पि संजमपालणं होदि तहा सए णियंतणं णत्थि दु जंगल-वण-उववणतित्थे वि भावविगिदि-संजमणासो होदि।

अहो ज्ञानी! स्व परिणामों पर नियंत्रण है तो महलों में भी संयम-पालन हो सकता है और स्व पर नियंत्रण नहीं है तो जंगल-वन-उपवन एवं तीर्थ पर भी भाव विकृति, संयम नाश हो सकता है।

सम्यक् विचार - 72

अहो अप्पा! संजमो आदणिब्भरो, अवर-णिमित्त-मेलणे वि वइरागी संजमम्हि दिढो होदि।।

अहो आत्मन् ! संयम आत्म निर्भर है, पर-निमित्त मिलने पर भी वैरागी संयम में दृढ़ रहता है।

सम्यक् विचार - 73

अहो मित्त! माणी-माणवो सव्व-मज्जादाओ विणस्सेदि। अहंकार-वसादो पाणी पुज्जाणं पि अविणयं करेदि।।

अहो मित्र! मानी मानव सर्व-मर्यादाओं को भंग कर देता है। अहंकार के वश व्यक्ति पूज्यों का भी अविनय करने लगता है।

सम्यक् विचार - 74

सिक्खा-दिक्खा-धण-कण्णा-वयणं च पत्त-परिक्खित्तु हि दिज्जा, अण्णहा सव्वणासकारणं हुज्जा।।

शिक्षा-दीक्षा, धन, कन्या एवं वचन पात्र-परीक्षा करके ही देना चाहिए, अन्यथा सर्वनाश का कारण बन जाती है।

सम्यक् विचार - 75

एय-अणायारं असच्चं च लुक्किदुं अणेय-असच्चाणं आसयेदि पुणो वि असच्चं पगडेदि।।

एक अनाचार, असत्य को छुपाने के लिए अनेकों असत्यों का अवलम्बन लेना पड़ता है, फिर भी असत्य प्रकट हो ही जाता है।

सम्यक् विचार - 76

दिव्व-पयासमंतो सियवादबोहो एव।।

दिव्य-प्रकाश देने वाला स्याद्वाद-बोध ही है।

सम्यक् विचार - 77

जीवणे एरिसं हि कज्जं कुणेहि, जेण मणसंतावं ण वि पत्तेज्जा। चित्तं संतावणं महाहिंसा। जो सग-जीवणे सग-चित्तं विसाद-संकिलेसत्तं णो दिंतेदि, सो परम-करुणासीलो त्थि।।

जीवन में ऐसा ही कार्य करो जिससे मन संताप को प्राप्त न हो। चित्त को संतापित करना महा-हिंसा है। जो अपने जीवन में स्व-चित्त को विषाद संक्लेशता नहीं देता वह परम-करुणाशील है।

सम्यक् विचार - 78

सव्वणयसमूहेहिं लोय-संववहारो, एय-णय-विसेस-पक्खो अत्थ-किरियागारी णवि होदि।।

सर्व नयों के समूह से ही लोक-संव्यवहार चलता है, एक नय विशेष का पक्ष अर्थ क्रियाकारी नहीं होता है।

सम्यक् विचार - 79

सच्चत्थबोहो सम्मणएहिं हि होदि।।

सत्यार्थ का बोध सम्यक्-नयों के द्वारा ही होता है।

सम्यक् विचार - 80

सम्मवियारो वत्ति-वत्तित्तं उत्तमं करेदि, तम्हा सगवियारं विसाल-करणस्स पुरिसत्थं कादव्वं।।

सम्यक्-सोच व्यक्ति के व्यक्तित्व को महान् बना देता है, इसीलिए स्व-सोच को विशाल बनाने का पुरुषार्थ करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 81

तच्चणाणी पडिक्खणं बोहि-समाहि-सम्मभावाणं उज्जमं करेदि, सो एयक्खणं पि विहा णो णस्सेदि।।

तत्त्वज्ञानी प्रतिक्षण बोधि-समाधि एवं साम्यभाव का पुरुषार्थ करता है, वह एक क्षण भी व्यर्थ नहीं जाने देता है।

सम्यक् विचार - 82

अहो णाणी! पत्तेग-कालम्हि वत्थुं सदिसं णवि होदि, किण्णु सहावस्स सदिसत्तं सग-कत्तव्वं।।

अहो ज्ञानी! प्रत्येक काल में वस्तु सदृश नहीं हो सकती है, परन्तु स्वभाव को सदृश रखना स्व-कर्तव्य है।

सम्यक् विचार - 83

सम्म-णिद्दोस-समणचरिया-पालणादो बोहि-उवलद्धी होदि।

सम्यक् निर्दोष श्रमण-चर्या के पालन से बोधि की उपलब्धि होती है।

सम्यक् विचार - 84

चरियाए णिम्मलदा एवं भावविसुद्धी आदसिद्धीए मूलसाहणं। तित्थयर-सिरि-महावीर-सामी सव्व-वीसस्स एवमेव पावणपवित्त-उवएसं दिंतेदि।।

चर्या की निर्मलता एवं भाव-विशुद्धि आत्म-सिद्धि का मूल-साधन है। तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी ने सर्व-विश्व के लिए यही पावन-पवित्र उपदेश दिया है।

सम्यक् विचार - 85

अहो पण्ण! जदि कस्सचिद संसोहण-संभावणा अत्थि दु जाणावेज्जा, अण्णहा विहाभासणं पि विहा। कस्स चिद भावा संकिसेदा होंतु च संसोहण-संभावणा हि णत्थि दु राग-भासासमिदिहासं णो कुणेज्जा।।

अहो प्रज्ञ! यदि किसी के सुधार की सम्भावना है, तो समझाना चाहिए, अन्यथा व्यर्थ में बोलना भी व्यर्थ है। किसी के परिणाम संक्लेशित हों और सुधार की संभावना ही नहीं है, तो स्व-भाषा समिति का ह्रास न करें।

सम्यक् विचार - 86

तच्चणाणेणं हि आदसंती संभवा, तम्हा सज्जणा सग-समयं तच्चणाणब्भासम्हि जुंजेज्जा।।

तत्त्वज्ञान से ही आत्मशान्ति सम्भव है, इसीलिए सज्जनों को स्व-समय को तत्त्वज्ञान के अभ्यास में ही लगाना चाहिए।

सम्यक् विचार - 87

अहो पण्णप्पा! णियप्पा हि णियभावाणं सच्चं जाणेदि, अण्णेणं पिच्छणाए किं आवस्सगत्तं?

अहो प्रज्ञात्मन् ! स्वात्मा ही स्व-परिणामों के सत्य को जानता है, अन्य से पृच्छना की क्या आवश्यकता है?

सम्यक् विचार - 88

णाणी! मोक्खमग्गे आदणिही एव महाणिही, अण्ण-सव्व-णिही अकज्जायारी।।

ज्ञानी! मोक्ष-मार्ग में आत्म-निधि ही महा-निधि है, अन्य सभी निधियाँ अकार्यकारी हैं।

सम्यक् विचार - 89

अहो अप्पा! सग-भावा सुरक्खेहि; अवर-भावा तुज्झ बंध-मोक्खस्स कारणेसुं कारणं णत्थि।।

अहो आत्मन् ! स्व-परिणामों को सँभालो; पर-परिणाम आपके बंध तथा मोक्ष के कारणों में कारण नहीं हैं।

सम्यक् विचार - 90

हे मुमुक्खू! गम्म-गमग-भावो पवित्तो दु मोक्खमग्गो पसत्थो होहिदि।।

हे मुमुक्षु! गम्य-गमक भाव पवित्र है, तो मोक्ष मार्ग प्रशस्त होगा।

सम्यक् विचार - 91

दिढसंकप्पो वत्ति-वत्तित्तं वरेण्णं कुव्वेदि।।

दृढ़-संकल्प व्यक्ति के व्यक्तित्व को महान् बनाता है।

सम्यक् विचार - 92

णिण्णयस्स दिढत्तं वीसे वीसासं ठावेदि। जेसिं णिण्णयो दिढो णत्थि, तेसिं कोवि वीसासं णो करेदि। अप्प-णिण्णयसत्तिं वड्ढेदव्वं जं जीवण-उण्णयणं इच्छा।।

निर्णय की दृढ़ता विश्व में विश्वास स्थापित कराती है। जिनका निर्णय दृढ़ नहीं है, उनका कोई विश्वास नहीं करता। अपनी निर्णय शक्ति को बढ़ाना चाहिए, जिसको जीवन उन्नत करना है।

सम्यक् विचार - 93

अहो अप्पा! जं समया सम्मभावो य समदिट्ठी सो चेव साहु-सहावी।

अहो आत्मन् ! साम्यभाव समदृष्टि जिसके पास है वही साधु-स्वभावी है।

सम्यक् विचार - 94

अहो सिस्स! गुरूदो गुप्पं किंपि कज्जं मा कुण, पत्तेग-ठिदीए गुरू एव सहयारी। सब्बोह-दाणत्थं पहवो णो आगमेहिंति, गुरू एव सच्चत्थ-बोहं करेहिदि।

अहो शिष्य! गुरु से गुप्त कोई कार्य मत करो, प्रत्येक स्थिति में गुरु ही सहकारी होंगे। सद्बोध देने प्रभु नहीं आयेंगे, गुरु ही सत्यार्थ-बोध करायेंगे।

सम्यक् विचार - 95

हे मुमुक्खू! आदतुट्ठिं विसएहिं णो आदसाहणाए कुण, अंतरेण आदसाहणाए आदसिद्धी णो लहिस्सदि।।

हे मुमुक्षु ! आत्म-तुष्टि विषयों से नहीं आत्म-साधना से करो, बिना आत्म-साधना के आत्म-सिद्धि नहीं मिलेगी।

सम्यक् विचार - 96

हे मित्त! आदविसुद्धीए सुदाराहणा विसिट्ठ-साहणं।।

हे मित्र! आत्म विशुद्धि के लिए श्रुताराधना विशिष्ट साधन है।

सम्यक् विचार - 97

सगीय-जीवणं कट्ठदाणं पि हिंसाभावो, तम्हा आदभावाणं संकिलेसदाए सया रक्खणं कुज्जा।।

स्वकीय जीवन को कष्ट देना भी हिंसा भाव है, इसीलिए आत्म-परिणामों की संक्लेशता से सदा रक्षा करो।

सम्यक् विचार - 98

वीस-रट्ठा परमाणुअत्थस्स णो अणुव्वदाणं आवस्सगत्तं। अहिंसाए हि संती-मग्गो ण दु हिंसाए।।

विश्व-राष्ट्रों को अणुबम की नहीं; अणुव्रतों की आवश्यकता है। हिंसा शान्ति का मार्ग नहीं है, शान्ति का मार्ग अहिंसा में ही है।

सम्यक् विचार - 99

अहो अप्पा! अक्खयपद-लाहस्स मग्गो रदणत्तय-धम्मो, अक्खयपद-लाहस्स उवायो अण्णो को वि णत्थि ।।

अहो आत्मन् ! अक्षय पद प्राप्ति का मार्ग रत्नत्रय धर्म है, अन्य कोई उपाय अक्षय पद प्राप्ति का नहीं है।

सम्यक् विचार - 100

अहो अप्पा! सग-जीवणं जीवेहि, पर-जीवी होऊण मा जिय।।

अहो आत्मन् ! स्व-जीवन जीना सीखो, पर-जीवी बनकर मत जिओ।

सम्यक् विचार - 101

अहो मुमुक्खू! णिय-सुह-दुक्खस्स संवेदेहि, परगीय-सुह-दुक्खम्हि मा किलेसेहि।।

अहो मुमुक्षु! स्व सुख-दुःख का संवेदन करो, परकीय सुख-दुःख में क्लेश प्राप्त मत करो।

सम्यक् विचार - 102

अहो णाणी! एरिसं कज्जं कुण जेण कंचिद जीवं हीण-भावणा ण जम्मेदि य णियम्हि अहंभावो ण जम्मेदि।।

अहो ज्ञानी! कार्य ऐसा करो जिससे किसी जीव को हीन-भावना न आए और स्वयं के अंदर अहं भाव जन्म न ले पाए।

सम्यक् विचार - 103

अहो अप्पा! उवगूहण-वच्छल्लेण सह साहु-पुरिसा स-पर-परिणामाणं ठिदिकरणं करेंति ।।

अहो आत्मन् ! उपगूहन एवं वात्सल्य के साथ साधु पुरुष स्व-पर परिणामों का स्थितिकरण करते हैं।

सम्यक् विचार - 104

सच्चभासणेण सह, सच्च-जीवणं जीवेहि। सच्चजीवणं हि वरेण्णं कुव्वेहिदि।।

सत्य बोलने के साथ, सत्य जीवन जीना सीखो। सत्य जीवन ही महान् बनायेगा।

सम्यक् विचार - 105

अहो मित्त! सग-णिण्णये णत्थित्तं मा पवेसेहि, सग-वियारं विसालत्थि- जुत्तं कुण।।

अहो मित्र! स्व-निर्णय में नास्तिपने को प्रवेश मत दो, स्व-सोच विशाल अस्ति से युक्त करो।

सम्यक् विचार - 106

सग-पर-परिणामेसुं विसुद्धदा-सब्भावो मोक्खमग्गो।।

स्व-परिणाम एवं पर-परिणामों में विशुद्धता जीवित रखना मोक्षमार्ग है।

सम्यक् विचार - 107

आदधम्मे लोयधम्मे य भिण्णत्त-भावो । लोयधम्मादो परमत्थसिद्धी असंभवा तहा परमत्थादो लोयववहारो असंभवो। उहयधम्मा सग-सग-ठाणम्हि एव कज्जयारी, ण दु अवर-ठाणम्हि ।।

आत्मधर्म एवं लोक धर्म दोनों में भिन्नत्व भाव है। लोक धर्म से परमार्थ सिद्धि असंभव है और परमार्थ से लोक व्यवहार असंभव है। उभय धर्म स्व-स्व स्थान पर ही कार्यकारी हैं, पर स्थान पर नहीं।

सम्यक् विचार - 108

मित्तादो वि वरं सद-साहिच्चं। जं गंथ-अज्झयणस्स विसणं, सो कदा वि एगलत्त-आखेडो णो होहिदि।।

मित्रों से भी श्रेष्ठ सद्-साहित्य होता है। जिसे ग्रंथ अध्ययन का व्यसन हो वह कभी भी अकेलेपन का शिकार नहीं होगा।

सम्यक् विचार - 109

अहो अप्पा! परिग्गह-चागे हि आदसंती, ण दु परिग्गह-संचये।।

अहो आत्मन् ! परिग्रह त्याग में ही आत्मशान्ति है, परिग्रह के संचय में नहीं मिलती आत्म-शान्ति।

सम्यक् विचार - 110

धम्म-अहिंसा-णिग्गंथगुरु-अत्ताणुसार-सत्थ-जिणागम-देवाहि-देव-अरिहंत देवा य जे पापुण्णंति, तेसिं भव्ववरराणं अदु वीसस्स अण्णा कावि विसिट्ठ-संपत्ती णत्थि।।

धर्म अहिंसा, गुरु निर्ग्रन्थ, आप्तानुसार शास्त्र जिनागम, देवाधिदेव अरिहन्त देव जिसे प्राप्त हो जायें, उस भव्यवर के लिए अब विश्व की अन्य कोई सम्पत्ति विशिष्ट नहीं।

सम्यक् विचार - 111

अहो अप्पा! सच्च-पहावणा सदो होदि च असच्च-अपहावणा सयं होदि, तम्हा सग-जीवणं सच्चेणं सह जीवेहि।।

अहो आत्मन् ! सत्य की प्रभावना स्वत: होती है और असत्य की अप्रभावना स्वयं होती है, इसीलिए स्व जीवन को सत्य के साथ जिओ।

सम्यक् विचार - 112

लोए अणेगाणेग-जीवा ते सग-सग-अणुसारेण पवित्तिं करेंति तहा तेसिं वियारा वि भिण्णा भिण्णा। सु-वियारधारा-रट्ठ-भत्ति-भावणाए खलु सासणं गदिमाणं। ण दु सच्छंदवियारेहिं।।

लोक में अनेकानेक जीव हैं, वे स्व-स्व के अनुसार प्रवृत्ति करते हैं और उनके सोच-विचार भी भिन्न-भिन्न हैं। स्वच्छंद सोचों से राष्ट्र नहीं चलता, सम्यक् विचारधारा, राष्ट्र भक्ति भावना से ही शासन चलता है।

सम्यक् विचार - 113

अहो मित्त! मिल्लेदि सव्वेण, किण्णु एत्तो हि जेण भविस्से वच्छल्लपुव्व-मेलणं होज्जदे।।

अहो मित्र! मिलो सबसे, पर इतना ही मिलो जिससे भविष्य में वात्सल्यपूर्वक मिलन होता रहे।

सम्यक् विचार - 114

जदि संबंधेसुं महुरत्त-सब्भावं इच्छेसि दु मलिणत्तस्स पुव्विं तत्थेव उव्वेढेहि जेण मेलणम्हि महुरदा-सब्भावो होज्जदे।।

यदि रिश्तों में मधुरता बनाये रखना चाहते हो, तो मलिनता आने के पूर्व वहाँ से विदा ले लो, जिससे मिलन में मधुरता बनी रहे।

सम्यक् विचार - 115

णाणीजणा णाणमय-मेलणं तहा अण्णाणमय-मेलणं करेंति।।

ज्ञानी जन मिलन करते हैं ज्ञानमय और अज्ञानी का मिलन है अज्ञानमय।

सम्यक् विचार - 116

कुण मेलणं विण्णोहिं विण्णो होऊण; ण दु सत्तू होदूणं सज्जणाणं एवमेव चिण्हं।।

विद्वानों से मिलन करो विद्वान् बनकर; शत्रु बनकर नहीं, सज्जनों की यही पहचान है।

सम्यक् विचार - 117

णाणीजणा सग-सत्ति-अणुहवं किच्चा कज्जणिण्णयं करेंति। अण्णाणी-जणा राग-सत्ति-बोहेण विणा हि कज्ज-पारंभं किच्चा उवहासपत्ता हुवेंति।।

ज्ञानी जन स्वशक्ति का अनुभव कर कार्य करने का निर्णय लेते हैं। अज्ञानी स्व-शक्ति का बोध किए बिना ही कार्य प्रारंभ कर उपहास के पात्र बनते हैं।

सम्यक् विचार - 118

सयल-तच्चेसुं पहाणं आदतच्चं। आदा एव परमप्पा हुवेदि। सयल-सुह-भोत्ता आदा एव।।

सर्व तत्त्वों में प्रधान आत्म-तत्त्व है। आत्मा ही परमात्मा बनती है। आत्मा ही सर्व सुखों का भोक्ता होता है।

सम्यक् विचार - 119

सुवियारो हि जीवं विसिट्ठ-उच्चत्तं देदि, तम्हा पत्तेय-जीवं अप्प-वियारं विसालं कादव्वं।

सम्यक्-सोच ही व्यक्ति को विशिष्ट-ऊँचाइयाँ प्रदान कराता है, इसीलिए प्रत्येक व्यक्ति को अपना सोच विशाल करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 120

अंतोकरण-पवित्तत्तणस्स चिण्हं सुइमयचिंतणं। पवित्त-चित्ते हि पवित्तचिंतणं जम्मेदि।।

अन्त:करण की पवित्रता का प्रतीक शुचिमय सोच ही होती है। पवित्र हृदय में ही पवित्र सोच का जन्म होता है।

सम्यक् विचार - 121

विद्धजण-संपक्केण वेरग्गं वड्ढेदि, तम्हा णव-दिक्खिद-साहगा अणुहवी-विद्ध-साहगाणं सण्णिहीए सददं पुरिसत्थं कुज्जा।।

वृद्धजनों के संपर्क से वैराग्य वृद्धि होती है, इसीलिए नव-दीक्षित साधकों को अनुभवी-वृद्ध-साधकों की सन्निधि का सतत पुरुषार्थ करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 122

सम्म-समाही अप्पं भववारिधीदो तारेदि, तम्हा साहगा सदेव समाहि-साहणं कुज्जा।।

सम्यक्-समाधि आत्मा को भव समुद्र से तार देती है, इसीलिए साधकों को सदा समाधि की साधना करते रहना चाहिए।

सम्यक् विचार - 123

हरिसम्हि हरिसिदभावो सरलं, किण्णु विसादम्हि वि हरिसिद-हवणं सिक्ख।।

हर्ष में हर्षित होना सरल है, पर विषाद में भी हर्षित होकर रहना सीखो।

सम्यक् विचार - 124

किलेस-कारण-उवट्ठिदे सदि वि पसण्णत्तं ण हरिसेदु, पत्तेय-खणं चित्त-पमुदिदो, पसण्णो होदु एरिसं अप्पं सक्कारिदं कुण।

क्लेश का कारण उपस्थित होने पर भी प्रसन्नता कम न हो, हर क्षण चित्त प्रमुदित हो, प्रसन्न हो ऐसा अपने आपको संस्कारित करो।

सम्यक् विचार - 125

कुण एरिसं कज्जं जेण स-पर कल्लाणं होदु। भव-मंगलं होदु, भाव-मंगलं होदु, सव्वत्थ मंगलमेव मंगलं होदु।।

ऐसा कार्य करो जिससे स्व-पर कल्याण हो। भव मंगल हो, भाव मंगल हो, सर्वत्र मंगल ही मंगल हो।

सम्यक् विचार - 126

सम्म-बोहो वरेण्णत्तं पडि पणोल्लेदि, सोचेव बोहिं पयच्छेदि।।

सम्यक् बोध श्रेष्ठता की ओर प्रेरित करता है, वही बोधि को प्रधान करता है।

सम्यक् विचार - 127

सच्चत्थ-वत्थुविवत्था तियालिगा वत्थु धम्मो त्थि, आसि, होहिदि। इमं णट्ठकरण-सामत्थं कंचिवि जीवं समया णत्थि।।

सत्यार्थ वस्तु व्यवस्था त्रिकालिक है, वस्तु धर्म है, था और रहेगा। इसे नष्ट करने की सामर्थ्य किसी के पास नहीं है।

सम्यक् विचार - 128

सच्चत्थमग्गे गमणं तस्स पेरणा य मुमुक्ख-कत्तव्वं।।

सत्यार्थ मार्ग पर चलना और चलाना मुमुक्षु का कर्तव्य है।

सम्यक् विचार - 129

आद-पबलसत्तू पमादो त्थि, तम्हा सज्जणा पमादचागं कुज्जा।।

आत्मा का प्रबल शत्रु प्रमाद है, इसीलिए सज्जन महा-पुरुषों को प्रमाद का त्याग कर देना चाहिए।

सम्यक् विचार - 130

सयल-विज्जासु परमत्थविज्जा वरेण्ण-अखंडविज्जा। पत्तेग-भव्वप्पं परमत्थविज्जा-बंभविज्जा-अज्झप्प-विज्जाणं च सददं अब्भासेदव्वं।।

सर्व-विद्याओं में परमार्थ-विद्या श्रेष्ठ अखण्ड विद्या है। प्रत्येक भव्य प्राणी को परमार्थ-विद्या, ब्रह्म-विद्या, अध्यात्म-विद्या का सतत अभ्यास करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 131

सम्मबोहणट्ठं समदा आवस्सगा, संतभावादो हि संभवा सुदोवलद्धी य विसुद्धभावुप्पत्ती । विसुद्धभावादो हि संभवा समाही।।

सम्यक् बोध के लिए समता की आवश्यकता है, शांत भाव से ही श्रुतोपलब्धि और विशुद्ध भावों की प्राप्ति संभव है। विशुद्ध भावों से ही समाधि संभव है।

सम्यक् विचार - 132

सम्म-सहावी-साहगा एव आगमकुसलणादा हुंति य तेसिं सियवाद-विज्जा-कोसलं सहजेण हि पत्तेज्जा।।

साम्य स्वभावी साधक ही आगमों के कुशल ज्ञाता होते हैं और उन्हें स्याद्वाद विद्या कौशल सहज ही प्राप्त हो जाता है।

सम्यक् विचार - 133

जत्थ सच्चत्थबोहो तत्थ संजमाचरणं सयमेव वड्ढेदि।।

जहाँ सत्यार्थ-बोध हो जाता है, वहाँ संयमाचरण स्वयमेव ही वर्धमान होने लगता है।

सम्यक् विचार - 134

जे सग-जीवणे दुह-कट्ठ-किलेसा-णो, इच्छेसि, ते अण्णं पडि वि असुहं णो चिंतह सददं एरिसं चिंतह-सव्व जीवणं आणंदमयो होदु।।

जो स्व-जीवन में दुःख, कष्ट, क्लेश नहीं चाहते वे अन्य किसी के प्रति भी अशुभ न सोचें। निरन्तर ऐसा विचार करो कि—सभी का जीवन आनन्दमय हो।

सम्यक् विचार - 135

सच्छ-चित्तत्थं सम्मचिंतणं आवस्सगं। सच्छ-चित्तमेव णिम्मलचारित्तं परिपालेदि। एरिसं उज्जमं कुण जेण चित्त-चारित्त-भग्गं च सच्छं होज्जा।।

स्वस्थ चित्त के लिए सम्यक्-चिंतन अनिवार्य है। स्वस्थ चित्त ही पवित्र चारित्र का पालन कर पाता है। ऐसा पुरुषार्थ करो जिससे चित्त, चारित्र और भाग्य स्वस्थ रहे।

सम्यक् विचार - 136

एवमेव रहस्स-विज्जासारो 'कुण सगप्पदिट्ठिं', इमाए दिट्ठीए सव्व-किलेस-खयो होदि।।

यही गूढ़ विद्या का सार है कि—स्वात्म दृष्टि बनाओ, इसी दृष्टि से सर्व-क्लेशों का क्षय होगा।

सम्यक् विचार - 137

आदसुह-इच्छुगा बहिप्पवंचादो सया हि आदरक्खणं करेदि, सो सददं एयंतठाणे सुण्णसहाव-आणंदं गेण्हेदि।।

आत्मसुख इच्छुक बाह्य-प्रपञ्चों से हमेशा आत्म-रक्षा करता है, वह निरन्तर एकान्त स्थान में शून्य-स्वभाव का आनन्द लेता है।

सम्यक् विचार - 138

तुवं आदकल्लाणं इच्छेसि दु सहावं परियट्टेहि, परभावं तुहं णो परियट्टेसि।।

आप आत्म कल्याण चाहते हो तो स्वभाव में परिवर्तन लाओ, परभाव में आप परिवर्तन नहीं ला सकते।

सम्यक् विचार - 139

आदोक्कस्स-चिंतणं पडिक्खणं करणिज्जं। विवेगी-जणा सपरहिदचिंतणं तु करेंति, किण्णु पढमं आदोक्कस्स-पुरिसत्थं हि करेंति। जस्स सग-उक्कस्सो हि णत्थि, सो अवरस्स किं उक्कस्सं करेहिदि।।

आत्मोत्कर्ष का विचार प्रतिक्षण करना चाहिए। विवेकी प्राणी स्व-पर हित चिंतन तो करते हैं, परन्तु सर्वप्रथम आत्मोत्कर्ष का ही पुरुषार्थ करते हैं। जिसका स्व-उत्कर्ष ही नहीं वह पर का क्या उत्कर्ष करेगा।

सम्यक् विचार - 140

सच्चत्थ-बोहोवलब्धी सु-सत्थ-णिमित्तेणं हि होहिदि।।

सत्यार्थ-बोध की उपलब्धि सद्-शास्त्रों के माध्यम से ही होगी।

सम्यक् विचार - 141

जीवो धम्म-मम्मं अणुऊलदाए हि बुज्झेदि, पडिऊलदाए हिदगर-सिक्खा वि णो रुच्चेदि।।

जीव को धर्म का मर्म अनुकूलता में ही समझ में आता है, प्रतिकूलता में हितकर शिक्षा भी नहीं रुचती।

सम्यक् विचार - 142

जत्थ माण-अवमाणभाव-अभावो, तत्थेव आदसंतीए पुण्णसब्भावो संभवो।।

जहाँ मान-अपमान भाव का अभाव है वहीं आत्मशान्ति का पूर्ण सद्भाव संभव है।

सम्यक् विचार - 143

वीससंति-मूलमंतं अहिंसा। अहिंसाए विणा वीससंती असंभवा। परोप्परे मित्ती-अखंडदा वि अहिंसाए हि संभवा।।

विश्वशान्ति का मूलमंत्र अहिंसा है। अहिंसा के बिना विश्वशान्ति असंभव है। परस्पर में मैत्री-अखण्डता भी अहिंसा से ही संभव है।

सम्यक् विचार - 144

सम्मत्तं सोम्मत्त-कारणं। सोम्मत्तं इच्छेसि दु सम्मत्तं धारेहि।।

साम्यता सौम्यता का कारण है। सौम्यता चाहिए तो साम्यता धारण करो।

सम्यक् विचार - 145

सच्चमग्ग-णाणं आचरणपुण्णजीवणं च भग्गवंत-जीवो हि जिएहिदि। अभव्वप्पा सच्चत्थ-मग्गस्स सम्म-आसयं ण लहेंति।।

सत्यमार्ग का ज्ञान व आचरणपूर्ण जीवन भाग्यवान भव्य जीव ही जी पाएगा। अभव्यात्मा सत्यार्थ-मार्ग का सम्यक्-आश्रय प्राप्त नहीं कर पाते।

सम्यक् विचार - 146

सदाचार-सुवियारा य जीवस्स वत्तित्तं उच्चट्ठाणं देंति, तम्हा पत्तेय-जीवं अप्पाचरणवियारं च पवित्तं कुज्जा।।

सदाचार, सद्-विचार व्यक्ति के व्यक्तित्व को ऊपर उठाते हें, इसीलिए प्रत्येक व्यक्ति को अपना आचरण एवं विचार पवित्र करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 147

अप्पणिब्भर-माणवो परलोय-आसिदो ण होदि। पत्तेय-जीवो सग-पुरिसत्थेणं अप्पणिब्भरो होज्जा तहेव देस-सक्किदि-विगासो होहिदि।।

आत्म-निर्भर मानव पर-लोक पर आश्रित नहीं होता है। प्रत्येक व्यक्ति को स्व-पुरुषार्थ से आत्म-निर्भर बनना चाहिए तभी देश एवं संस्कृति का विकास होगा।

सम्यक् विचार - 148

सेट्ठ-वत्ता-हवणत्थं णियदंसणेण सह, भिण्णदंसणं पि अज्झएज्जा। अंतरेण विसालणाणेण वत्थुत्तणिण्णयो णो होदि।।

श्रेष्ठ वक्ता बनने के लिए स्वदर्शन के साथ, भिन्न दर्शन का भी अध्ययन करना चाहिए। बिना विराट् ज्ञान के वस्तुत्व निर्णय नहीं होता है।

सम्यक् विचार - 149

अहिणव-वत्थुं णवीण-उमंग-रायस्स कारणं, जो वि रागो होदि, सो णव-णव कम्मबंधस्सेव कारणमत्थि।।

अभिनव वस्तु नवीन उमंग एवं राग की कारण है, जो भी राग होगा वह नवीन-नवीन कर्म बंध का ही कारण है।

सम्यक् विचार - 150

अहो साहग! णव-णव उवयरणेसु लक्खं मा कुण, अवित्त णव-णव णिज्जरा-ठाणं वड्ढेहि, ण दु बंध-ठाणं।।

अहो साधक! नवीन-नवीन उपकरणों पर लक्ष्य मत ले जाओ, अपितु नवीन-नवीन निर्जरा स्थान बढ़ाओ, बंध स्थान नहीं।

सम्यक् विचार - 151

अहो अप्पा! सग-परिणामा पस्स; वत्थुं अण्णं णो, वत्थुं तु सग-वत्थुत्ते अत्थि। तं ण रायरूवं ण दोसरूवं, रायद्दोसपरिणामादु जीवस्सेव संति।।

अहो आत्मन् ! स्व-परिणामों पर दृष्टिपात करो; वस्तु पर नहीं, वस्तु तो स्व-वस्तुत्व में है। वह न राग रूप, न द्वेष रूप, राग-द्वेष रूप परिणाम तो जीव के ही हैं।

सम्यक् विचार - 152

अहो अप्पा! सहजभाव-लद्धस्स दव्वस्स उवओगं कादव्वं तहा असहजत्तेण सया हि आदरक्खा-भावं धारेदव्वं। एवमेव सम्मचिंतणं।।

अहो आत्मन् ! सहज भाव से प्राप्त द्रव्य का उपयोग करना चाहिए तथा असहजता से सदा ही आत्मरक्षा का भाव रखना चाहिए। यही सम्यक् विचार है।

सम्यक् विचार - 153

जदि जीवो णाम-अणुऊलं कज्जं कुणेदि, दु लोए तस्स जसं अग्गे अग्गे पसरेदि।।

नाम के अनुकूल व्यक्ति काम करे तो लोक में उसका यश आगे-आगे फैलता है।

सम्यक् विचार - 154

अहो समण! भगवं हवणत्थं सगीयभावा सुरक्ख। भावाणुसारेण हि साहणा होदि।।

अहो श्रमण! भगवान् बनना है, तो स्वकीय भावों को सँभालो। भावों के अनुसार ही साधना होती है।

सम्यक् विचार - 155

अहो साहग! परदोसं मा दिज्ज, सग-सहावे परिवट्टणं कुण। एवमेव सच्चत्थमग्गो।।

अहो साधक! पर को दोष मत दो, स्व-स्वभाव में परिवर्तन करो। यही सत्यार्थ मार्ग है।

सम्यक् विचार - 156

अहो कल्लाणत्थी! आदगुणं उब्भावेहि, परदोसं मा परिगणेहि।।

अहो कल्याणार्थी! आत्मगुण प्रकटाओ, पर के दोष मत गिनाओ।

सम्यक् विचार - 157

अहो णाणी! सग-सहावम्हि चिंतणं कुणेहि, मिस्सभावादो अपहाविदो हुव।।

अहो ज्ञानी! स्व-स्वभाव पर विचार करो, मिश्रभाव से अप्रभावित रहो।

सम्यक् विचार - 158

अहो अप्पा! सगहिद-भावेण कदा वि उदासीणो ण हुवेज्जा। भावदसा परिणाम-सहावी, इमं पडिपलं संभालेहि।।

अहो आत्मन्! स्वहित भाव से कभी उदास नहीं होना। भाव दशा परिणाम स्वभावी है, इसे पल-पल सँभालो।

सम्यक् विचार - 159

अहो पण्णप्पा! कोहे कं पि णिण्णयं णो कुज्जा, पडिक्खणं णियम्हि पसण्णो हुवेदि, खिण्णदाए रक्खणं कुणेहि। परादु भिण्णो, णिये अभिण्णो हि हुवेहि ।।

अहो प्रज्ञात्मन् ! क्रोध में कोई निर्णय नहीं करना, प्रतिक्षण स्व में प्रसन्न रहना, खिन्नता से रक्षा करना। पर से भिन्न, निज में अभिन्न ही रहना।

सम्यक् विचार - 160

सम्म-पुरिसत्थो सव्वकज्जसिद्धि-पुण्णत्तं च पयच्छेदि।।

सम्यक्-पुरुषार्थ सर्व-कार्यों की सिद्धि तथा पूर्णता प्रदान कराता है।

सम्यक् विचार - 161

जं जीवं असुहभावादो मुत्ती णो लहेदि, तस्स असुहगदी णियदा हुवेदि।

जिस जीव को अशुभ-भावों से मुक्ति नहीं मिल रही है, उसकी अशुभ गति नियत हो गई है।

सम्यक् विचार - 162

अहो पाणी! वयणं सुवयणं वुच्च, हिद-मिद-पियं च वुच्च, जेण विस्समित्ती होदु, वीसविणासग-सद्दं मा वुच्च। वयणं वीणा हुव बाणो णो।।

अहो प्राणी! वचन सुवचन बोलो, हित-मित-प्रिय बोलो, जिससे विश्व-मैत्री हो, विश्व विनाशक शब्द मत बोलो। वचन वीणा बने, वचन बाण न बने।

सम्यक् विचार - 163

सगीय-पक्ख-कहणं मिच्छा णत्थि, किण्णु अप्पवाणीए बज्झकरणं मिच्छा। सुणवंतसोदस्स सहीणदाए चिंतेज्जा। तं पि सग-विवेगेणं णिण्णय-करणस्स अवसरं दिंत।।

स्वकीय पक्ष रखना गलत नहीं है, परन्तु अपनी बात के लिए ही बाध्य करना गलत है। सुनने वाले श्रोता की स्वाधीनता का ध्यान रखना चाहिए, उसे भी स्व-विवेक से निर्णय करने का अवसर दो।

सम्यक् विचार - 164

अहो मित्त! सग-साहणासिद्धीए अप्पपक्ख-हेदू पबलो होदव्वो।।

अहो मित्र! स्व-साधना की सिद्धि हेतु, अपना पक्ष-हेतु प्रबल होना चाहिए।

सम्यक् विचार - 165

जो भव्वप्पा सच्चत्थमग्गे गच्छेदि, सो चेव जीवो सिवत्तं लहेदि।।

जो भव्यात्मा सत्यार्थमार्ग पर चलता है वही जीव शिवत्व को प्राप्त करता है।

सम्यक् विचार - 166

आदसाहगो सारीरिग-माणसिग-वायणिग-अबंभादो पुण्ण-सुरक्खिदो होदि।।

आत्म-साधक शारीरिक, मानसिक, वाचनिक अब्रह्म से पूर्ण सुरक्षित रहता है।

सम्यक् विचार - 167

अहो मित्त! सण्णाण-णिमित्तेणं सण्णा-उवसमणं कुणेहि। सण्णा-उवसमेण विणा किं मोक्खो? मोक्खमग्गसिद्धी वि असंभवा।।

अहो मित्र! संज्ञान के माध्यम से संज्ञाओं का उपशमन करो। संज्ञाओं के उपशमन के बिना मोक्ष क्या? मोक्षमार्ग की सिद्धि भी सम्भव नहीं है।

सम्यक् विचार - 168

आदसम्माण-पदणे सदि वत्तिविगासो रुंधेदि, तम्हा पडिक्खणं आदसम्माणरक्खणं कादव्वं च आद-अवमाणं ण होदु, एरिसं हि कज्जं णिच्चं कादव्वं।।

आत्म सम्मान के गिरते ही व्यक्ति का विकास ठहर जाता है, इसीलिए प्रतिक्षण आत्म सम्मान की रक्षा करना चाहिए और आत्म अपमान न हो ऐसा ही कार्य नित्य करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 169

विही अत्थि दु णिही अत्थि, विणा णिहीए णिहि-उवलद्धी णत्थि। णिहि-आकंखं मा कुण, अप्पविहीए वड्ढेहि, एरिसं सम्मसाहणं कुणेहि।।

विधि है तो निधि है, बिना निधि (भाग्य) के निधि की उपलब्धि नहीं है। निधि की आकांक्षा मत करो, अपनी विधि की वृद्धि हो ऐसी सम्यक् साधना करो।

सम्यक् विचार - 170

अहो साहग! सम्म-सड्ढाणं देवत्तकारणं। सच्चत्थबोहो आदसोह-साहणं।।

अहो साधक! सम्यक्-श्रद्धान देवत्व का कारण है। सत्यार्थ बोध आत्मशोध का साधन है।

सम्यक् विचार - 171

जदि जीवो रायदसाए णियंतेहि दु विहा कम्मबंधं णो होदि।।

यदि जीव राग दशा पर नियंत्रण कर ले तो व्यर्थ के कर्म बंध को प्राप्त न हो।

सम्यक् विचार - 172

णरदेहं सुरदुल्लहं; पण्णजणा विहा-संकप्पवियप्पेसुं सग-समयं णो णस्संति।।

नर देह सुर-दुर्लभ है; प्रज्ञजन व्यर्थ के संकल्प-विकल्पों में स्व-समय को व्यय नहीं करते हैं।

सम्यक् विचार - 173

अत्थरायो सव्व-अणत्थ-बीयं, तम्हा परमत्थदिट्ठिं किच्चा अत्थरागचागं कुणेहि।।

अर्थराग सर्व-अनर्थों का बीज है, इसीलिए परमार्थ दृष्टि बनाकर अर्थ राग का त्याग करो।

सम्यक् विचार - 174

णिद्दोस-संजमसाहणा एवं परभावादो णिव्वियप्पभावो आदसंति-उवायो। संकप्प-वियप्पेसुं आदसंति-अण्णेसणं अण्णाणभावो।।

निर्दोष संयम-साधना एवं पर-भावों से निर्विकल्प भाव आत्मशान्ति का उपाय है। संकल्प-विकल्पों में आत्मशान्ति खोजना अज्ञान भाव है।

सम्यक् विचार - 175

सग-सासणस्स विवरीद-गमंता णूणं विणासं पावेंति, सच्चत्थधम्म-चागी इव।।

स्व-शासन के विपरीत गमन करने वाले निश्चित ही विनाश को प्राप्त हो जाते हैं, सत्यार्थ धर्म का त्याग करने वाले के सदृश।

सम्यक् विचार - 176

णव्व-उवयरणाणि णव्वरायकारणाणि तहा णव्वरायो णव्वकम्मबंध-कारणं। कम्मबंधो भवदुक्खमूलं।।

नवीन उपकरण नवीन राग के कारण हैं और नवीन राग नवीन कर्म बन्ध का कारण है। कर्म-बंध संसार दुःख का मूल है।

सम्यक् विचार - 177

पंचमयाले सग-परिणाम-णिम्मलदा वरेण्णसाहणा। महत्तपुण्णं परिणाम-णिम्मलत्तं हि। सयल-धम्मिग-अणुट्ठाणं मेत्तं विसुद्ध-परिणामाणं हि कीरेंति।।

पंचमकाल में स्व-परिणामों को निर्मल बनाकर रखना श्रेष्ठ साधना है। परिणामों की निर्मलता ही महत्त्वपूर्ण है। सर्व-धार्मिक-अनुष्ठान एकमात्र विशुद्ध-परिणामों के लिए ही किए जाते हैं।

सम्यक् विचार - 178

सज्झसिद्धीए अडल-अचल-लक्खं किच्चा गमणं पत्तेय-मुमुक्खु-कत्तव्वं।।

साध्यसिद्धि पर अटल-अचल लक्ष्य बनाकर चलना प्रत्येक मुमुक्षु का कर्त्तव्य है।

सम्यक् विचार - 179

सहावं सुरक्खिदूण जो गच्छेदि, तस्स वीसे कोवि सत्तू णो होदि।।

स्वभाव को सँभालकर जो चलता है। उसका विश्व में कोई शत्रु नहीं होता है।

सम्यक् विचार - 180

समाहीए समदा होदव्वा, विणा समदाए समाही असंभवा।।

समाधि के लिए समता चाहिए, बिना समता के समाधि संभव नहीं है।

सम्यक् विचार - 181

बोह-बोही-संजोगो समाहिकारणं।।

बोध तथा बोधि दोनों का संयोग समाधि का हेतु बनता है।

सम्यक् विचार - 182

सगो व्व परहिदस्स वि णाणीजणा वियारेंति, किण्णु अण्णसत्थीजणा परोवगारचिंतणं सिविणे वि णो करेंति।।

स्व सादृश पर-हित का भी ज्ञानी जन विचार करते हैं, परन्तु अज्ञ स्वार्थीजन परोपकार का स्वप्न में भी विचार नहीं करते हैं।

सम्यक् विचार - 183

सारीरिग-साहणाए सह भावविसुद्धि-आदसुद्धीए वि साहणा होदव्वा, बहिसिद्धीए आदविसुद्धी आवस्सगा होदव्वा।।

शारीरिक साधना के साथ भाव-विशुद्धि आत्म शुद्धि की भी साधना होनी चाहिए। बाह्य सिद्धि के लिए आत्म विशुद्धि अनिवार्य होना चाहिए।

सम्यक् विचार - 184

धम्म-भूदत्थत्तं जीवं संकडयाले बुज्झेदि। संकडट्ठगणस्स उवरंतं माणवो पुणो पावेसुं लिप्पेदि।।

धर्म की भूतार्थता व्यक्ति को संकट के काल में समझ आती है। संकट टलने के उपरान्त मानव पुन: पापों में लिप्त हो जाता है।

सम्यक् विचार - 185

णायगो दु णायगो एव, अवर-कारगो णत्थि।।

ज्ञायक तो मात्र ज्ञायक ही है, पर का कारक नहीं।

सम्यक् विचार - 186

संजम-सड्ढाणस्स णिम्मलदाए आवस्सगं सुदणाणं।।

संयम एवं श्रद्धान की निर्मलता के लिए श्रुतज्ञान अनिवार्य है।

सम्यक् विचार - 187

सुदसेवा आदविसुद्धीए एवं भवातीदस्स सुंदर-उवायो।।

श्रुतसेवा आत्म-विशुद्धि एवं भवातीत होने का सुन्दर उपाय है।

सम्यक् विचार - 188

तियाल-भत्तिपुण्ण-भाव-जिणभत्ती य भव-भव-कम्माणं णट्ठम्हि समत्था, तम्हा कुण अहोणिसं जिणभत्तिं।।।

त्रिकाल भक्तिपूर्ण भाव जिन भक्ति भव-भव के कर्मों का नाश करने में समर्थ है, इसीलिए अहर्निश जिनभक्ति करो।

सम्यक् विचार - 189

आराहणा-साहणा आचरण-छायाए हि सोहेदि। अंतरेण सदाचारेण आराहणा-साहणा च सुगंध-विहीणपुप्फमिव।।

आराधना-साधना आचरण की छाया में ही सुशोभित होती है। बिना सदाचार के आराधना एवं साधना सुगन्ध विहीन पुष्प के तुल्य है।

सम्यक् विचार - 190

सम्म-आयार-वियारो सम्म-भासणं च जीवस्स विसिट्ठ-वत्तित्तस्स अहिणाणं।।

सम्यक्-आचार-विचार एवं सम्यक्-भाषण व्यक्ति के विशिष्ट व्यक्तित्व की पहचान हैं।

सम्यक् विचार - 191

धम्म-अत्थ-काम-मोक्ख-पुरुसत्थेसुं धम्मपुव्वगं मोक्ख-पुरुसत्थ-सिद्धिं कादव्वं।।

धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों में धर्मपूर्वक मोक्ष पुरुषार्थ की सिद्धि करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 192

अहो अप्पाण! समयम्हि समयं पस्स, समयसारो हुवेहिदि।।

अहो आत्मन् ! समय पर; समय को देखो, समयसार बन जाओगे।

सम्यक् विचार - 193

जो सिद्धंत-ववहारम्हि एयदा-जीवणं जीवेदि, सोचेव सम्मसाहगो तहा जस्स सिद्धंतेसुं ववहारम्हि य भिण्णत्तमत्थि सो अविस्सासपत्तो।।

जो सिद्धान्त एवं व्यवहार में एकता का जीवन जीता है वही सच्चा साधक है तथा जिसके सिद्धान्तों एवं व्यवहार में भिन्नत्व है वह अविश्वास का पात्र है।

सम्यक् विचार - 194

अप्पुल्लास-पुव्वगं किद-साहणा सिग्घमेव फलेदि। तम्हा अप्प-पसण्णदा-पुव्वगं धम्म-धम्मप्पा पडि सया संवेग-भावं धार।।

आत्मोल्लास पूर्वक की गई साधना शीघ्र ही फलवती होती है, इसीलिए आत्म प्रसन्नता पूर्वक धर्म एवं धर्मात्माओं के प्रति हमेशा संवेग-भाव रखो।

सम्यक् विचार - 195

संवेयभावो आदसिद्धि-कारणं संवेयसहाव-आलबंणं पत्तेग-आदहिदेसिं गेण्हेदव्वं।।

संवेग भाव आत्मसिद्धि का कारण है, संवेग स्वभाव का आलम्बन प्रत्येक आत्म हितैषी को लेना चाहिए।

सम्यक् विचार - 196

धम्मिग-भावणा अहिदगारी णत्थि, किण्णु धम्मंधो होदूण अवरं पडि संवेयणाहीणो होदूण जीवणं घादगं। सच्चत्थ-पबोहो होदव्वो, ण दु धम्मंधत्तं। जीवेहि जीवावेहि इदं मग्गं धम्मो भासेदि।।

धार्मिक भावना होना अहितकारी नहीं है, परन्तु धर्मान्ध होकर पर के प्रति संवेदनाहीन होकर जीना घातक है। सत्यार्थ-प्रबोध होना चाहिए, न कि धर्मान्धता। धर्म तो जिओ और जीने देने का मार्ग बताता है।

सम्यक् विचार - 197

आदसंति-आदसंतोसो सदि आदसिद्धी संभवा तहा सा आदसंती
keâòeeYeeJe- DeYeeJeesefn ndeeYeJee~ Deeo ndefe FÛÚshe ogkeêÇCesh efnei I ebkeâòeeYeeJe-
Ûeei eb~

आत्मशान्ति, आत्म संतोष होने पर ही आत्मसिद्धि संभव है और वह आत्मशान्ति कर्तापन के अभाव में ही संभव है। आत्मशान्ति चाहते हो तो शीघ्र कर्तापन का त्याग करो।

सम्यक् विचार - 198

पंचमयाल-पज्जंतं भारह-वरिसे सिरि-जिणसासणं-जएहिदि, तम्हा हीणभावणा अणावस्सगा, उस्साह-उमंगस्स आवस्सगत्तं।।

पंचमकाल के अन्त तक भारत वर्ष में 'श्रीजिन शासन जयवंत' रहेगा, इसीलिए हीन-भावना की आवश्यकता नहीं है, उत्साह, उमंग की आवश्यकता है।

सम्यक् विचार - 199

सिग्घकोविस्स पदणं णिच्छिदं। कोहो महाजाला, सा सपरं संजलिदूण भम्मं करेदि।।

शीघ्र कोपी का पतन निश्चित होता है। क्रोध महा-ज्वाला है, वह स्व-पर को झुलसाकर भस्म कर देता है।

सम्यक् विचार - 200

विवत्तियाले तच्चणाणिं धेज्जं रक्खेदव्वं, जओ धेज्जं विणा काविलोगिग-पारमत्थिग-उवलद्धी णवि होज्जदे।।

विपरीतता के काल में तत्त्वज्ञानी को धैर्य रखना चाहिए, क्योंकि धैर्य के बिना लौकिक एवं पारमार्थिक किसी भी प्रकार की उपलब्धि नहीं हो सकती।

सम्यक् विचार - 201

अहो भव्व! भवेसुं णियंतगो हि भव-भमणे णियंतणं पप्पेदि। जस्स भावेसुं णियंतणं णत्थि सो ण होज्जदे भवातीदो।।

अहो भव्य! भावों पर नियंत्रण करने वाला ही भव-भ्रमण पर नियंत्रण पा सकता है। जिसका भावों पर नियंत्रण नहीं है वह भवातीत नहीं हो सकता।

सम्यक् विचार - 202

सारल्लं जीवं महाणत्तं देदि, तम्हा सारल्लपुव्वगं जीवणं आरंभेहि।।

व्यक्ति को सरलता महानता प्रदान कराती है, इसीलिए सरलता पूर्वक जीवन जीना प्रारंभ करो।

सम्यक् विचार - 203

सयलधम्मेसुं आदधम्मेव सव्ववरेण्णं।।

सर्वधर्मों में आत्मधर्म ही सर्वश्रेष्ठ है।

सम्यक् विचार - 204

आदविसुद्धीए पवित्त-साहणाइं तित्थवंदणा-संजमायरणादि-पवित्त-अणुट्ठाणाइं। अदो सददं तित्थवंदणा-संजमायरणस्स य णिद्दोसदाए उज्जमेज्जा।।

तीर्थ वंदना, संयमाचरण आदि पवित्र अनुष्ठान आत्मविशुद्धि के पवित्र साधन हैं; अत: सतत तीर्थ वन्दना एवं संयमाचरण की निर्दोषता पर पुरुषार्थ करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 205

बोह-बोही कम्मातीदत्थं आवस्सगं। बोहं विणा सोहो णत्थि।।

बोध-बोधि कर्मातीत होने के लिए अनिवार्य है। बोध के बिना शोध नहीं होता है।

सम्यक् विचार - 206

संजमसाहणा सज्झ-सिद्धीए करिज्जदे, ण दु लोयप्पसिद्धीए। णिग्गंथ-सज्झं णिव्वाण-मग्गो, ण दु णिम्माणं।।

संयम-साधना साध्य-सिद्धि के लिए की जाती है, लोक प्रसिद्धि के लिए नहीं। निर्ग्रन्थों को साध्य निर्माण नहीं, निर्वाण मार्ग है।

सम्यक् विचार - 207

समय-परियट्टणे सदि सहावं णवि परियट्टेज्जा। सहजसहावे लक्खं तं सया एयत्तमेव धारेदव्वं।।

समय परिवर्तन होने पर स्वभाव में परिवर्तन नहीं लाना चाहिए। सहज स्वभाव पर लक्ष्य है उसे सदा एकत्व ही रखना चाहिए।

सम्यक् विचार - 208

आदसिद्धि-कम्मखयट्ठं च बंभभावो-आवस्सगो होदव्वो, बंभचेरं विणा सयल-तवस्सा विहा।।

आत्मसिद्धि, कर्मक्षय के लिए ब्रह्मभाव अनिवार्य होना चाहिए, ब्रह्मचर्य के बिना सम्पूर्ण तपस्या व्यर्थ है।

सम्यक् विचार - 209

आदविसुद्धि-उस्साहसत्ति-आदसाहणत्थं च समत्तभावो होदव्वो।।

आत्म विशुद्धि, उत्साह शक्ति, आत्म साधना के लिए समता भाव होना चाहिए।

सम्यक् विचार - 210

सम्म-साहणाए हि सम्म-समाही होदि, तम्हा पत्तेय-आदहिदेसिं अज्जव-मज्जवधम्मेण सह आदसाहणं कुज्जा।।

सम्यक्-साधना से ही सम्यक् समाधि होती है, इसीलिए प्रत्येक आत्म हितैषी को आर्जव-मार्दव धर्म के साथ आत्म-साधना करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 211

धम्ममग्गो हि परमसंति-मग्गो, सेसा-सयल-मग्गा उम्मग्गा। जम्हि अहिंसा-परमबंभस्स उवासणा तहा रयणत्तय-णिम्मलाराहणा अत्थि, सोचेव धम्मो।।

धर्ममार्ग ही परम शान्ति का मार्ग है, शेष सभी उन्मार्ग हैं। धर्म वही है जिसमें अहिंसा परम ब्रह्म की उपासना है तथा रत्नत्रय की निर्मल आराधना है।

सम्यक् विचार - 212

वत्थुं अणंत-धम्मप्पगं, वत्थुस्स सम्म-उवओगं सुसिक्ख। जो वत्थुस्स सम्म-उवओगं कुणेदि, सो अत्थिग-सामाइग-उण्णदिं लहेदि।।

वस्तु अनन्त धर्मात्मक होती है, वस्तु का सम्यक् प्रयोग करना सीखो। जो वस्तु का व्यवस्थित प्रयोग करता है वह आर्थिक, सामाजिक उन्नति को प्राप्त करता है।

सम्यक् विचार - 213

वत्थु-सतंतत्तं अणुभवेहि; कणो कणो सुतंतो, अदो मा सिक्ख
DeCeguli; ceb peeCesh, efmekeKesh, nebYeuesh~ heeaise keappesnei e neeefeeeebeUeesh~~

वस्तु स्वतन्त्रता को समझो; कण-कण स्वतंत्र है, अत: दास बनना मत सीखो। समझो, सीखो, सँभलो। प्रत्येक कार्य में स्व-स्वामित्व का ध्यान रखो।

सम्यक् विचार - 214

वियाराणुसारेण आयरणं पहावेदि; जदि जीवो वियारादो पदिदो णो दु आयरणं पि पदिदो णवि होदि, तम्हा पढमं जीवं अप्पवियारेसुं हि वियारेदव्वं।।

विचारों के अनुसार आचरण प्रभावित होता है; यदि व्यक्ति विचारों से च्युत न हो तो उसका आचरण भी पतित नहीं हो सकता है, इसीलिए सर्वप्रथम व्यक्ति को अपने विचारों पर ही विचार करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 215

अणेगहुत्तं जीवो वियारादो चइज्जदि, तदा सो आयरणादो चएदि।।

अनेकों बार व्यक्ति विचारों से पतित हो चुका होता है, तब वह आचरण से पतित होता है।

सम्यक् विचार - 216

वियारा देंति आयरणं पवित्तत्तं, तम्हा आयरण-पवित्तदाए वियार-णिम्मलत्तं धारेज्जा।।

आचरण को पवित्रता विचार देते हैं, इसीलिए आचरण की पवित्रता के लिए विचारों की निर्मलता बनाकर रखो।

सम्यक् विचार - 217

साहगं असुह-दंसण-सवण-किरियादो सया आदरक्खणं कादव्वं।।

साधक को अशुभ दर्शन, अशुभ श्रवण एवं अशुभ क्रिया से हमेशा आत्म रक्षा करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 218

सोचेव वरेण्णपुरिसो, जो जहा कहेदि तहेव सो सग-आयरणं पि कुणेदि।।

श्रेष्ठ पुरुष वही है, जो जैसा कहे वैसा ही वह स्वयं आचरण भी करे।

सम्यक् विचार - 219

कज्ज-अकज्ज-फलं किं होहिदि; इमम्हि जीवो वियारेज्जा दु सो अणत्थादो आदरक्खणं करिज्जदि।।

कार्य एवं अकार्य का फल क्या होगा; इस पर व्यक्ति विचार कर ले तो वह अनर्थ से आत्म रक्षा कर सकता है।

सम्यक् विचार - 220

संपडि-जीवणं, भविस्सचिंतणं करंतं, जीवेदव्वं। विणा वियारं भावुगदाए किंपि कज्जं णवि कादव्वं।।

वर्तमान का जीवन भविष्य का ध्यान रखते हुए जीना चाहिए। बिना विचारे भावुकता में कोई कार्य नहीं करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 221

सयं वियारेहि पुण कज्जं कुणेहि ण दु अवर-बुद्धीए।।

दूसरे की बुद्धि से कार्य न करें, स्वयं सोचें फिर कार्य करें।

सम्यक् विचार - 222

जीवणम्हि पक्खपादादो पुहं हवेहि एवं रायवसादु किंपि णिण्णयं ण वि गहेहि।।

जीवन में पक्षपात से परे एवं राग वश कोई निर्णय न लें।

सम्यक् विचार - 223

खणिग-सुह-इच्छाए जीवो विवेग-सुण्णो होऊण दिग्घसुहं णस्सेदि।।

क्षणिक सुख की चाह में व्यक्ति विवेक शून्य होकर दीर्घसुख का नाश कर लेता है।

सम्यक् विचार - 224

जदा जदा तुम्हाण जीवणे किंपि कट्ठं हुज्जा दु धीरजादो सयं संभालेज्जा, पुरादण-पुरिसा णिरक्खेदव्वा ताण उवरिं पि उवसग्गा जा कट्ठाइं आगमेंति।।

जब-जब तुम्हारे जीवन में कोई कष्ट हो तो धैर्यपूर्वक स्वयं को सँभालना चाहिए, पुराण पुरुषों को निहारना चाहिए उनके ऊपर भी उपसर्ग हुए हैं, कष्ट आये हैं।

सम्यक् विचार - 225

अहो अप्पा! सयल-पदत्थेसुं पस्स सुद्ध-संगह-णएणं पस्स दव्वत्ते महासत्तं।।

अहो आत्मन् ! सर्व पदार्थों में शुद्ध संग्रह नय से देखो, द्रव्यत्व में महासत्ता देखो।

सम्यक् विचार - 226

अवराइं दोसो ण देदूण जीवं सग-पुरिसत्थ-भग्गेसुं च चिंतेज्जा।।

दूसरों को दोष न देकर व्यक्ति को स्व-पुरुषार्थ एवं भाग्य पर विचार करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 227

अण्णाणी विहा अवर-कज्जम्हि वियारेदि एवं णाणी सगीय-देव-पुरिसत्थं च जाणिदूणं कज्जं करेदि।।

अज्ञानी व्यर्थ में पर के कार्य पर विचार करता है और ज्ञानी स्वकीय दैव एवं पुरुषार्थ को समझकर कार्य करता है।

सम्यक् विचार - 228

विहा चिंता-अवेक्खा सेट्ठ-कज्ज-करणस्स सम्म-पुरिसत्थं कादव्वं।।

व्यर्थ की चिंता करने की अपेक्षा; श्रेष्ठ कार्य करने का सम्यक्-पुरुषार्थ करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 229

सगप्प-तच्च-णादा हि सच्चत्थ-णादा।।

स्वात्म तत्त्व का ज्ञाता ही सत्यार्थ का ज्ञाता होता है।

सम्यक् विचार - 230

सयल-सत्थ-णादा जदि मोह-राय-दोस-काम-कोहादीणं च णवि जएदि दु तस्स सत्थ-णाणं मोक्खमग्गम्हि अकिंचिदयरं।।

सर्व शास्त्र ज्ञाता यदि मोह, राग-द्वेष, काम, क्रोधादि पर विजय प्राप्त नहीं कर सका तो उसका शास्त्र ज्ञान मोक्षमार्ग में अकिंचित्कर ही है।

सम्यक् विचार - 231

अहो मित्त! तम्हि मग्गे गच्छेहि जम्हि मग्गे असच्च-अण्णाय-अणीदि-अबंभभाव-पोसणं च ण वि कुणिज्जदे।।

अहो मित्र! उस मार्ग पर चलो जिस मार्ग पर असत्य, अन्याय, अनीति, अब्रह्म भाव का पोषण न करना पड़े।

सम्यक् विचार - 232

अहो अप्पा! पबल-पुण्णोदए हि सम्म-वियारा आगमेंति।।

अहो आत्मन् ! प्रबल पुण्योदय पर ही सम्यक् विचार आते हैं।

सम्यक् विचार - 233

वीस-विसालत्त-कारणं अखंडत्तं। एगदाए हि विसालदा संभवा।।

अखण्डता विश्व की विशालता का कारण है। एकता से ही विशालता संभव है।

सम्यक् विचार - 234

रट्ठ-वीस-रक्खाए सह आदहिदं कादव्वं।।

राष्ट्र रक्षा, विश्व रक्षा के साथ आत्म-हित करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 235

सगप्प-रक्खगो हि सयल-वीस-रक्खणं करेदि, जो सग-रक्खणं ण करिज्जेदि, सो अवर-रक्खणं पि करेहिदि।।

स्वात्म रक्षक ही सर्व-विश्व की रक्षा कर सकता है, जो स्वयं की रक्षा नहीं कर सकता वह अन्य की रक्षा भी नहीं कर पाएगा।

सम्यक् विचार - 236

परीसह-उवसग्ग-दुक्खाणि कम्माधीणाइं, इमाणि समत्तादो णायग-भावेणं णिरिक्खणं तहा अकिलेसभावो साहीणो हि।।

परीषह, उपसर्ग, दुःख कर्माधीन है, परन्तु इनको समतापूर्वक ज्ञायक भाव से निहारना और क्लेश को प्राप्त नहीं होना स्वाधीन ही है।

सम्यक् विचार - 237

मेत्त-सव्वदरिसी वाणी सुबोह-कारणं, ण दु किंपि अण्ण-कप्पिद-वयणं।।

सद्बोध का कारण एक मात्र भगवत् सर्वज्ञ वाणी है, अन्य कोई लिप्त वचन सद्बोध के साधन नहीं है।

सम्यक् विचार - 238

अहो अप्पा! कुण संति-अण्णेसणं णियंतरंगम्हि, ण दु बहिरंगम्हि।।

अहो आत्मन् ! शान्ति की खोज बाहर में नहीं निज अंतरंग में करो।

सम्यक् विचार - 239

णाण-सब्भावो सेट्ठो णत्थि, जिणागमाणुऊल-तच्चणाणेण सह आदणाण-सब्भावो सुहंकरो।।

ज्ञान होना श्रेष्ठ नहीं, जिनागम के अनुकूल तत्त्व ज्ञान के साथ आत्म ज्ञान होना श्रेयस्कर है।

सम्यक् विचार - 240

णाण-णिम्मलत्तणं णिच्छिदं वीस-कल्लाणयारी।।

ज्ञान की निर्मलता निश्चित ही विश्व कल्याणकारी होती है।

सम्यक् विचार - 241

जस्स झेयं आदधम्मे, सोचेव वरेण्ण-धम्मप्पा।।

जिसका आत्मधर्म पर लक्ष्य है, वही उत्तम धर्मात्मा है।

सम्यक् विचार - 242

तित्थयर-पवयण-देसणा वीस-कल्लाणदायिणी, ण दु संपदायिगा।।

तीर्थंकर प्रवचन, देशना साम्प्रदायिक नहीं, अपितु विश्व कल्याण दायिनी है।

सम्यक् विचार - 243

आगमज्झप्पस्स य समीयरणं किच्चा धम्मोवएसणं वरेण्ण-वत्ताणं धम्मो।।

आगम एवं अध्यात्म का समीकरण बनाकर धर्मोपदेश करना श्रेष्ठ वक्ताओं का धर्म है।

सम्यक् विचार - 244

अहो अप्पा! सम्मभावाणं सदद तच्च-अहिगमस्स आवस्सगत्तं। तच्चबोहेण विणा, भावविसुद्धी णवि होदि।।

अहो आत्मन् ! सम्यक् भावों के लिए सतत तत्त्व अधिगम की आवश्यकता है। तत्त्व बोध के बिना भाव विशुद्धि नहीं हो सकती है।

सम्यक् विचार - 245

संकिलेसदाए भावविसुद्धी असंभवा। पत्तेय-आदसाहगं संकिलेसदाए पयदणत्तो सगरक्खणं कुव्वेदव्वं।।

संक्लेशता में भाव विशुद्धि संभव नहीं है। प्रत्येक आत्म साधक को संक्लेशता से प्रयत्नपूर्वक स्वयं की रक्षा करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 246

आदविसुद्धीए सदद उज्जमेज्जा। मोक्खमग्गे किंपि मुल्लवंत-वत्थुं तु सा मेत्तं आदविसुद्धी एव।।

आत्म विशुद्धि के लिए सतत पुरुषार्थ करते रहना चाहिए। मोक्षमार्ग में कोई मूल्यवान वस्तु है तो वह मात्र आत्म विशुद्धि ही है।

सम्यक् विचार - 247

आदसंतीए वरजणाणं संगदिं सज्झायं-सरूवचिंतणं च सददं कादव्वं।।

आत्मशान्ति के लिए श्रेष्ठजनों की संगति, शास्त्र स्वाध्याय एवं स्वरूप चिंतन निरंतर करते रहना चाहिए।

सम्यक् विचार - 248

समए सग-सुरक्खणं पण्णासीलदा। असंजमभाव-वित्ती य धम्म-जस-णासगा।।

समय पर स्वयं को संभाल लेना प्रज्ञाशीलता है। असंयम भाव, असंयम वृत्ति दोनों धर्म एवं यश के नाशक हैं।

सम्यक् विचार - 249

धम्म-धम्मप्पा पस्सिदूणं सहज-पमुदिद-भाव-सब्भावो भविदव्वत्त-णिम्मलत्ते हि संभवो। भविदव्वत्त-णिम्मलत्तेण विणा संवेयभावुप्पत्ती णत्थि।।

धर्म-धर्मात्माओं को देखकर सहज-प्रमुदित परिणाम होना भवितव्यता की निर्मलता पर ही संभव है। भवितव्यता निर्मलता के बिना संवेग भाव की उत्पत्ति नहीं होती है।

सम्यक् विचार - 250

उवएस-भासाणुसारेण सगभाव-णिम्माणं कुण, अण्णहा वंचणम्हि जिवेहिसि।।

उपदेश की जो भाषा है उसके अनुसार स्वयं के भाव बनाओ, अन्यथा धोखे में रहोगे।

सम्यक् विचार - 251

धम्म-धम्मप्पा पडि पीदि-भावम्हि वियारेहि, पुण णिच्छएहि तुमं धम्मप्पा होसि य णो।।

धर्म-धर्मात्माओं के प्रति प्रीति-परिणाम पर विचार करो, फिर निर्णय करना तुम धर्मात्मा हो या नहीं?

सम्यक् विचार - 252

सच्चत्थ-मग्गं गमणट्ठं पढमाओ कुबुद्धि-अणंत-इच्छाओ चागेहिदि।।

सत्यार्थ-मार्ग पर चलने के लिए सर्वप्रथम विपरीत बुद्धि एवं अनंत इच्छाओं को छोड़ना पड़ेगा।

सम्यक् विचार - 253

जह माणव-देहे सिरं, रुक्खे मूलं महत्तपुण्णं, तहेव सयलसाहणासुं अप्पज्झाणं पहाणमत्थि।।

जैसे मानव देह में सिर, वृक्ष में जड़ महत्त्वपूर्ण है उसी प्रकार सम्पूर्ण साधनाओं में आत्म-ध्यान प्रधान है।

सम्यक् विचार - 254

कामदेवादु आदरक्खणभावा दु मण-वियारेसुं णियंतणं कुण।।

मन्मथ से आत्म रक्षा के भाव हैं; तो मन के विचारों पर नियंत्रण करो।

सम्यक् विचार - 255

अहो अप्पा! आउ-कम्म-णिसेगा जावं सेसा; तावं कुणेहि एरिसं कम्मं, जेण कम्माइं आदपएसेसुं असेसाइं णत्थि।।

अहो आत्मन् ! आयु कर्म के निषेक हैं जब तक शेष; तब तक करो ऐसा कर्म, जिससे कर्म आत्म-प्रदेशों में न रहे अशेष।

सम्यक् विचार - 256

उत्तिण्णदाए सगीय-लक्खं सम्मं होदव्वं, लक्खं पडि दिढत्ताओ पदण्णासं वड्ढेदव्वं।।

उत्तीर्णता के लिए अपना लक्ष्य सम्यक् होना चाहिए, जो लक्ष्य बनाया है उसी ओर दृढ़तापूर्वक कदम बढ़ाना चाहिए।

सम्यक् विचार - 257

संकप्प-विमोयणमेव असाफल्लं आरंभेदि, लक्ख-भमिदत्तं हि असाफल्ल-कारणं।।

संकल्प छूटते ही असफलता प्रारम्भ हो जाती है। लक्ष्य की भटकन ही असफलता की कारण है।

सम्यक् विचार - 258

धम्म-अत्थ-काम-मोक्ख-पुरिसत्थेसुं धम्म-मोक्ख-पुरिसत्था दुल्लहा। जो धम्म-पुरिसत्थो साधेदि तस्स सेस-पुरिसत्था सदो हि साधंति।।

धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों में धर्म एवं मोक्ष पुरुषार्थ दुर्लभ है। जो धर्म पुरुषार्थ साध लेता है उसके शेष पुरुषार्थ स्वत: ही सध जाते हैं।

सम्यक् विचार - 259

तच्चणाणं पडि अंतरिगरुई विरलेसु जीवेसु हि होदि। जा तच्चणाणम्हि रुई होदि ते हु जगदीए सुही होंति।।

तत्त्वज्ञान के प्रति आंतरिक रुचि विरले जीवों के अन्दर ही होती है। जिन्हें तत्त्वज्ञान में रुचि होती है। वे ही जगती पर सुखी रहते हैं।

सम्यक् विचार - 260

सग-सुहेण सह जदि माणवो अवर-दुक्खस्स परिणाणं पि कुणदु, दु अंतरिग-कूरत्तं णस्सेहिदि।।

स्व सुख के साथ यदि मानव पर के दु:ख का भी ध्यान रख ले, तो आंतरिक क्रूरता समाप्त हो जाएगी।

सम्यक् विचार - 261

सम्मबोहत्थं पमाण-णयस्स आवस्सगत्तं। पमाणणय-णाणेण विणा जीवो सच्चत्थ-बोहं णवि लहेदि।।

सम्यक्-बोध के लिए प्रमाण-नय की आवश्यकता है, बिना प्रमाण-नय ज्ञान के जीव सत्यार्थ-बोध को प्राप्त नहीं हो सकता है।

सम्यक् विचार - 262

अहो मित्त! पसंसणीय-कज्जेहिं सगीय-पहावं वित्थारेहि ण दु अवर-णिंदाए।।

अहो मित्र! दूसरों की निंदा से नहीं, अपितु प्रशंसनीय कार्यों से अपना प्रभाव फैलाओ।

सम्यक् विचार - 263

अहो मित्त! पुण्णोदय-तिव्वत्ते पुण्णखीण-जणाणां पाणा मा हरेहि, जओ पुण्णं पि खयेदि, मा बूडेहि अहं-भावे।।

अहो मित्र! पुण्योदय की तीव्रता में पुण्यक्षीण जनों के प्राण मत लो, क्योंकि पुण्य का भी क्षय होता है, अहं भाव में मत डूबो।

सम्यक् विचार - 264

जीवणे सम्म-गुरुस्स आवस्सगत्तं तावदियं हि जावदियं माणवमुहम्हि णेत्ताणं आवस्सगत्तं।।

जीवन में सच्चे गुरु की आवश्यकता उतनी ही है जितनी मानव मुख पर नेत्रों की आवश्यकता है।

सम्यक् विचार - 265

जीवणे समीयरणं आवस्सगत्तं, जओ अदि-विणासकारणं हुवेदि।।

जीवन में समीकरण रखना अनिवार्य है, क्योंकि अति विनाश का कारण बन जाती है।

सम्यक् विचार - 266

पत्तेय-कज्जं विवेग-धिज्ज-गंभीरत्त-दूरदरसित्तेहिं सह कुव्वेदव्वं, जेण भविस्से पच्छादावं णो कुणिज्जदे।।

प्रत्येक कार्य विवेक, धैर्य, गंभीरता तथा दूरदर्शिता के साथ करना चाहिए, जिससे भविष्य में पश्चाताप न करना पड़े।

सम्यक् विचार - 267

अहोसाहग! धम्म-पहावणस्स परिणामो दु पढमं सग-आयरणं विसुज्झेहिदि, जदि सगीय-चरिया सुट्ठु णत्थि दु तुम्हाण सासद-पहावणा णवि होसि।।

अहो साधक! धर्म प्रभावना करने का परिणाम हो तो सर्वप्रथम स्वयं का आचरण विशुद्ध बनाना पड़ेगा, यदि स्वकीय चर्या ठीक नहीं है तो आपके द्वारा चिर स्थाई प्रभावना नहीं हो सकती है।

सम्यक् विचार - 268

धम्म-रहस्स-बोहणत्थं धम्ममय-जीवणं जिवेहिदि, धम्ममयेण विणा धम्मरहस्सबोहणं णवि आगमेहिदि।।

धर्म का मर्म समझने के लिए धर्ममय जीवन जीना होगा, धर्ममय हुए बिना धर्म का मर्म समझ में नहीं आएगा।

सम्यक् विचार - 269

संवरतच्चोवलद्धी जाए विधीए होदु तमेव पुरिसत्थं कादव्वं, जओ संवरतच्चसाहणा एव मोक्खतच्चं जच्छेहिदि।।

संवर तत्त्व की उपलब्धि जिस विधि से हो वही पुरुषार्थ करना चाहिए, क्योंकि संवर तत्त्व की साधना ही मोक्ष तत्त्व प्रदान कराएगी।

सम्यक् विचार - 270

भावदसाए पडिखणं चिंतेहि; सगीय-भावदसाविसुद्धी हि जीवं भगवं कुणेहिदि य सगीय-भावासुद्धी हि जीवं भवे भवे परिभमेहिदि।।

भाव दशा पर प्रतिक्षण विचार करो; स्वकीय भाव दशा विशुद्धि ही जीव को भगवान् बनाएगी और स्वकीय भाव-अशुद्धि ही जीव को भव-भव में भटकाएगी।

सम्यक् विचार - 271

कुण सग-ववहारं वरेण्णं, जेण सेट्ठजणेहिं पि तुम्हाण सम्माणं हुज्जा।।

स्वयं के व्यवहार को इतना श्रेष्ठ करो जिससे श्रेष्ठजनों के द्वारा भी आपका सम्मान हो सके।

सम्यक् विचार - 272

पमादे कत्थ धम्मो? धम्मे कत्थ पमादो? मुंच पमादं, धम्म-मग्गम्हि उस्साहादो उज्जमेहि।।

प्रमाद में धर्म कहाँ? धर्म में प्रमाद कहाँ? प्रमाद छोड़ो, धर्म मार्ग में उत्साहपूर्वक पुरुषार्थ करो।

सम्यक् विचार - 273

वदाणं पवित्तायरणं वदखंडणं चेव साहगभावेसुं आसिदं। जत्थ भावदिढत्तं तत्थेव वदपालणं एवं जत्थ दिढत्ताभावो तत्थ वदखंडणं हि होहिदि।।

व्रतों का पवित्र आचरण अथवा व्रतों का खण्डन साधक के भावों पर आश्रित है। जहाँ भावों की दृढ़ता होगी वहीं व्रत पालन होगा और जहाँ दृढ़ता का अभाव है वहाँ व्रत खण्डन ही होगा।

सम्यक् विचार - 274

बंभचेरं सील-धम्मं च सव्व-वदेसुं सव्व-वरेण्णं, गुणाकरं, सिद्धीणं मूलमंतं, तम्हा पयदणादो पल-पडिपलं सीलधम्मस्स रक्खणं कुणेहि।।

ब्रह्मचर्य; शील-धर्म सर्व व्रतों में सर्व-श्रेष्ठ है, गुणों की खान है, सिद्धियों का मूलमंत्र है, इसलिए प्रयत्नपूर्वक पल-प्रतिपल शील धर्म की रक्षा करो।

सम्यक् विचार - 275

पबल-पुण्ण-जोए अंतरंगभावणा सिग्घं फलेदि।।

प्रबल पुण्य योग में अंतरंग की भावना शीघ्र फलित होती है।

सम्यक् विचार - 276

अट्ठा जीवणस्स अपुव्व-णिही; इमेण विणा सव्वाणि कज्जाणि अपुण्णाणि।।

आस्था जीवन की अपूर्व निधि है; इसके बिना सर्व कार्य अधूरे हैं।

सम्यक् विचार - 277

सग-दोसा अणुरूवा, अवर दोसा सुमेरु व्व अण्णाणी हि पस्सेदि। एवं चेव जदत्थे दिट्ठिदोसो।।

स्व-दोष अणु रूप, पर-दोष सुमेरुवत् अज्ञानी ही देखता है, यही यथार्थ में दृष्टिदोष है।

सम्यक् विचार - 278

वियारसत्तिं विसालकरणस्स पुरिसत्थं णिच्चं कुणिज्जदे। जीवस्स वियार-विसालत्तं वत्तित्तं विसालं कुणेदि।।

विचार शक्ति विशाल करने का पुरुषार्थ नित्य करते रहो। व्यक्ति के विचारों की विशालता व्यक्तित्व को विराट् बनाती है।

सम्यक् विचार - 279

पहुस्स सियवाद-सइली वायणिग-अहिंसाए। जेण्ह-दंसणे वायणिग-सारीरिग-माणसिग-अहिंसाए वक्खा अत्थि।।

प्रभु की स्याद्वाद शैली वाचनिक अहिंसा के लिए है। जैन दर्शन में वाचनिक, शारीरिक एवं मानसिक अहिंसा की व्याख्या है।

सम्यक् विचार - 280

वीदराग-जिणसासणं पाणिमेत्त-रक्खणस्स चरिचं चरियं च करेदि।।

वीतराग जिनशासन प्राणिमात्र की रक्षा की चर्चा एवं चर्या करता है।

सम्यक् विचार - 281

जीवणे सारल्ल-आवस्सगत्तं, सरलहिदयी सदेव णियाणंदम्हि णंदेदि।।

जीवन में सरलता की आवश्यकता है, सरल हृदयी हमेशा निजानन्द में नन्दित रहता है।

सम्यक् विचार - 282

बहि-जीवणं जियवंतो सुहुम-तच्चणाण-गंभीरत्ते णवि पवेसेदि।।

बाह्य जीवन जीने वाला मनुष्य सूक्ष्म तत्त्व ज्ञान की गहराई में प्रवेश नहीं कर सकता है।

सम्यक् विचार - 283

देहाउरस्स अवेक्खाए मणारत्तं अहिग-घादगं देहाउरे संभवा मुत्ती, किण्णु मणस्स किंचिदवि असुद्धी दु असंती एव असंती।।

तन की अस्वस्थता की अपेक्षा मन की अस्वस्थता अधिक घातक है। तन की अस्वस्थता में मुक्ति संभव है, पर मन की किंचित् भी अशुद्धि है तो अशांति-ही-अशांति है।

सम्यक् विचार - 284

सम्मादिट्ठी णवि करेदि दुग्गदि-हेदुभूद-असुहकम्मबंधं, अवित्त पवित्त-भावविसुद्धीए पुव्व-भवेसुं किदाणं असुहकम्माणं खयेदि, एरिसं जिणवयणं। सुहत्थिं पयदणादो सग-सम्मत्त-रक्खणं कादव्वं।।

सम्यक्दृष्टि जीव दुर्गति के हेतुभूत अशुभ-कर्मों का बंध नहीं करता, अपितु पवित्र-भावों की विशुद्धि से पूर्व भवों में किए अशुभकर्मों का क्षय कर लेता है, ऐसा जिनवचन है। सुखार्थी को प्रयत्न पूर्वक स्व-सम्यक्त्व की रक्षा करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 285

सम्म-तच्चब्भासो आदसंति-सल्लेहणा-उत्तम-समाहि-साहणं।।

सम्यक्-तत्त्व-अभ्यास आत्मशान्ति, सल्लेखना और उत्तम समाधि का साधन है।

सम्यक् विचार - 286

जेसिं सग-भावेसुं णियंतणं होदि, ते णरा धम्मसंपण्णा।।

जिनका स्व-भावों पर नियंत्रण होता है, वे नर धर्म से सम्पन्न होते हैं।

सम्यक् विचार - 287

अहो पण्ण! जदि सग-सम्माणं इच्छेसि दु अवरावमाणं कदावि मा कुण, सदेव सव्वं जहा जोग्ग-सम्माणं देहि।।

अहो प्रज्ञ! स्व-सम्मान चाहते हैं तो पर का अपमान कभी मत करो, हमेशा सभी को यथा योग्य सम्मान देना सीखो।

सम्यक् विचार - 288

जत्थ वत्थुं सब्भूदं तत्थेव असब्भूदं पि। एग-समयम्हि वत्थुं सदासद-रूवं अत्थि।।

जहाँ वस्तु सत् भूत है वहीं असत् भूत भी है। एक ही समय पर वस्तु सतासत् रूप है।

सम्यक् विचार - 289

सज्जणा केणचिद सह वीसासघादं णवि करेंति। जं पावं पाणघादस्स होदि, तत्थेव पावं वीसासघादिं होदि, तम्हा वीसासघादी महापावी।।

सज्जन मनुष्य किसी के साथ विश्वास घात नहीं करते हैं। जो पाप प्राणघात का होता है, वही पाप विश्वासघाति को लगता है, इसीलिए विश्वास घाति महापापी कहलाता है।

सम्यक् विचार - 290

उवएस-कुसलत्तेण सह आयरणस्स कुसलत्तं पि आणेदव्वं, तदेव उवएस-कुसलत्तं सच्चत्थबोह-कारणं हुवेहिदि। चरियविहीण-णाणं आदहिदसाहणं ण वि होदि।।

उपदेश की कुशलता के साथ आचरण की कुशलता भी लाना चाहिए, तभी उपदेश की कुशलता सत्यार्थ-बोध का कारण बन पाएगी। कोरा ज्ञान आत्महित का साधन नहीं बन सकता है।

सम्यक् विचार - 291

जो जीवो सगपरिणामा अणुऊल-मित्तं करेदि; सदा सच्चत्थ-बोहं कारेदि तमेव सम्म-मित्तं।।

जो जीव स्वपरिणामों को अनुकूल मित्र बनाकर चलता है; सदा सत्यार्थ-बोध कराता है वही सम्यक् मित्र है।

सम्यक् विचार - 292

आदधम्म-सिद्धिं इच्छेसि तु सम्मत्तं पयडेहि; इत्तियं सारल्लं हुज्जा इत्तियं सारल्लं हुज्जा, जेण को वि अग्गीए पाडेदि तदावि सारल्लं णवि मुंचेहि ।।

आत्मधर्म की सिद्धि चाहिए तो साम्यता को प्रकट करो, इतने सरल हो जाओ, इतने सरल हो जाओ कि कोई अग्नि पर रखे तब भी सरलता न छूटे।

सम्यक् विचार - 293

विणयादो किद-विज्जब्भासो सव्वहा हिदगारी होदि।।

विनयपूर्वक किया गया विद्याभ्यास सर्वथा हितकारी ही होता है।

सम्यक् विचार - 294

बुद्धि-देह-वयणसत्तीए मा कुणेहि दप्पं, जओ तिण्हं वीसासो णत्थि, कदा विणस्सेज्जा? मुमुक्खूणं धम्मो-भावविसुद्धिं जीवमाणं जीवणं जिवेज्जा।।

बुद्धि, देह एवं वचन-शक्ति पर अहं मत करो, क्योंकि तीनों का कोई भरोसा नहीं है, कब नष्ट हो जाए? मुमुक्षुओं का धर्म है कि वह भाव-विशुद्धि जीवित रखते हुए जीवन जियें।

सम्यक् विचार - 295

अहो पण्णप्पा! सहावेसुं मज्झत्थ-भावं ठावेहि चित्तट्ठिदिं ववट्ठिदं कुण, धिज्जं धारिदूण तडत्थो होदूणं पंचपरमगुरुस्स सुमरणं कुण, पंचपरमेट्ठी एव सरणमत्थि।।

अहो प्रज्ञात्मन् ! स्वभावों पर माध्यस्थ भाव स्थापित करो, चित्त की स्थिति को व्यवस्थित करो, धैर्य धारण कर तटस्थ होकर पंचपरम गुरु का स्मरण करो, पंचपरमेष्ठी ही शरण हैं।

सम्यक् विचार - 296

जो सगप्पं पासादगुणेण मंडेदि, सो हि पंडिदो एवं जो कालुस्सेण संकिलेसिदो होदूणं संतावजालाए जलेदि सो पण्णाहीण-दरिद्दी अच्चंत-दया पत्तो ।।

जो स्वात्मा को प्रासाद गुण से मण्डित रखता है वही पंडित है और जो कालुष्य से संक्लेशित होकर संताप की ज्वाला में जलता है वह प्रज्ञाहीन दरिद्री अत्यंत दया का पात्र है।

सम्यक् विचार - 297

परमत्थपुण्णदिट्ठीए सह सत्तिग-जीवणं हि साहुत्तस्स भूदत्थजी-वणमत्थि, तम्हि मुमुक्खुं एयग्गचित्तो होदूणं जिवेदव्वं।।

परमार्थपूर्ण दृष्टि के साथ सात्विक जीवन ही साधुता का भूतार्थ जीवन है, उसी पर मुमुक्षु को एकाग्रचित्त होकर जीना चाहिए।

सम्यक् विचार - 298

पुराण-पुण्ण-पुरिसाणं गुण-सुमरणेण आदस्स असुहकम्मखयं होदि तहा तिव्व-पुण्ण-कम्मासवो होदि, एसो जिणोवएसो।।

पुराण पुण्य-पुरुषों के गुण स्मरण से आत्मा के अशुभ कर्मों का क्षय होता है तथा तीव्र पुण्य कर्म का आस्रव होता है। ऐसा जिनोपदेश है।

सम्यक् विचार - 299

जो सच्चत्थ-बोहं पत्तेदि, सो संवेग-भाव-जुत्तो होदूणं जीवणं जिवेदि।।

जिसे सत्यार्थ-बोध प्राप्त हो जाता है वह संवेग-भाव से युक्त होकर जीवन जीता है।

सम्यक् विचार - 300

अहो पण्णप्पा! जागरणादो मिच्चुं गेज्झेहि, किण्णु धम्मो णो मुंचेहि। धम्मो हि सव्वस्सो, सासद-सुह-संतीए परम-साहणं।

अहो प्रज्ञात्मन् ! जागृतिपूर्वक मृत्यु स्वीकार कर लेना, परन्तु धर्म नहीं छोड़ना। धर्म ही सर्वस्व है, शाश्वत सुख-शांति का परम उपाय है।

सम्यक् विचार - 301

अहो अप्पा! अण्णं अण्णमेव पगिण्ह, अण्णं कदावि अणण्णं ण होइज्जदे।।

अहो आत्मन् ! अन्य को अन्य ही स्वीकारो, अन्य कभी अनन्य नहीं हो सकता।

सम्यक् विचार - 302

वीसे सव्ववरेण्ण-संपत्ती सुदणाणं, सुदणाणेणेव धम्म-णेदिगत्त-सक्कार-सक्किदि-रक्खणं होदि।।

विश्व में श्रुतज्ञान सर्वश्रेष्ठ सम्पत्ति है, श्रुतज्ञान से ही धर्म, नैतिकता, संस्कार एवं संस्कृति की रक्षा होती है।

सम्यक् विचार - 303

साहिच्च-साहिच्चगार-सम्माणं विज्जा-सम्माणं, एव्व गुणग्गाहत्त-चिण्हं।।

साहित्य, साहित्यकारों का सम्मान विद्या का सम्मान है और यही गुणग्राह्यता का प्रतीक है।

सम्यक् विचार - 304

तवस्सी-चागी-संजमीजण-संसग्गेणं भूमी वि पुज्जिज्जदे।।

तपस्वी, त्यागी, संयमीजनों के संसर्ग से भूमि भी पूज्य हो जाती है।

सम्यक् विचार - 305

अहो अप्पा! सच्च-वायणत्थं पि जोग्गत्तं होज्जा। वीरत्तं अंतरेण वीर-वाणिं ण वि भासेज्जा।।

अहो आत्मन् ! सत्य वाचन के लिए भी योग्यता चाहिए। वीरता के बिना वीर वाणी नहीं कही जा सकती है।

सम्यक् विचार - 306

अहो पण्णप्पा! भावविसुद्धि-हेदूणं णिरंतर-अण्णेसणं कुणेहि तहा असुद्धि-हेदूहिंतो पयदणादो आदरक्खणं कुणेहि ।।

अहो प्रज्ञात्मन् ! भाव-विशुद्धि के हेतुओं की निरंतर खोज करो तथा अशुद्धि के हेतुओं से प्रयत्न पूर्वक आत्म रक्षा करो।

सम्यक् विचार - 307

सगप्प-परिणामाणं विसुद्धत्त-रक्खणं मुमुक्खुस्स पढमं अहिणाणं। भावविसुद्धीए विणा सयल-साहणा मिदगा, पदसुण्ण-वक्कमिव।।

स्वात्म परिणामों की विशुद्धता की रक्षा करना मुमुक्षु की प्रथम पहचान है। भाव-विशुद्धि के बिना सर्व-साधना मृतक है। पदशून्य वाक्यवत्।

सम्यक् विचार - 308

वीसवसुंधराए एगमेत्त-वीदराय-धम्मो हि अणेगंत-दिट्ठि-जुत्त-जगदिं सच्चत्थ-बोहं जच्छेदि।।

विश्व-वसुन्धरा पर एकमात्र वीतराग धर्म ही है जो अनेकान्त दृष्टि से युक्त जगती को सत्यार्थ-बोध प्रदान करता है।

सम्यक् विचार - 309

अहो अप्पा! सव्वं समया णिवसेहि, किण्णु सगेण सह णिवसेहि। अहोणिसं आदत्थत्तं अब्भासं कुणेहि।।

अहो आत्मन् ! सबके पास रहो, पर स्वयं के साथ रहो। अहर्निश आत्मस्थ होने का प्रयास करो।

सम्यक् विचार - 310

आदसाहगो पमादरहिदं पडिपलं सुद-पारायणेण सह आद-साहणं करेदि। आदोण्णदीए सुदब्भासं परम-हिदगारी।।

आत्मसाधक प्रमाद रहित पल-प्रतिपल श्रुत पारायण के साथ आत्म-साधना करता है। आत्मोन्नति के लिए श्रुत-अभ्यास परम-हितकारी है।

सम्यक् विचार - 311

सच्चत्थ-समीचीण-संजम-साहणा-पडिफलं सल्लेहणादो समाही होदि। भव्वजीवा इंदिय-मणं मोहित्तु समाहि-साहणाए सम्मब्भासं पडिखणं कुज्जा।।

सत्यार्थ-समीचीन संयम साधना का प्रतिफल सल्लेखना पूर्वक समाधि होती है। भव्य जीवों को इन्द्रिय एवं मन को वश कर समाधि-साधना का सम्यक् अभ्यास प्रतिक्षण करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 312

धम्म-साहणाणि अणेगाणि, किण्णु धम्मो दु वत्थु-सहावो। वत्थुसहावस्स आलंबणेण विणा सच्चत्थबोहो णवि लहेदि।।

धर्म के साधन अनेक हो सकते हैं, पर धर्म वस्तु स्वभाव है। वस्तु स्वभाव के आलम्बन के बिना सत्यार्थ बोध प्राप्त नहीं होता है।

सम्यक् विचार - 313

वीदराय-मग्गम्हि दिढधम्मी हि गच्छेदि, ण दु दिढत्त-सुण्णो।।

वीतराग मार्ग पर दृढ़धर्मी जीव ही चल पाता है, दृढ़ता शून्य नहीं।

सम्यक् विचार - 314

तत्थेव पसत्थदा, जत्थ भावेसुं विसुद्धत्तं णिवसेदि।।

प्रशस्तता वहीं रहती है जहाँ पर भावों में विशुद्धता निवास करती है।

सम्यक् विचार - 315

जीवण-पज्जंतं सम्म-मग्गे दिढत्तेण सह गमणं अच्चंत-परिस्सम-कज्जं।।

जीवन पर्यन्त सम्यक्-मार्ग पर दृढ़ता के साथ चलना अत्यंत परिश्रम का कार्य है।

सम्यक् विचार - 316

आदधम्मस्स रक्खणट्ठं पडिक्खणं विउज्झेदव्वं, एयक्खणस्स वि पमादं ण कादव्वं।।

आत्मधर्म की रक्षा हेतु प्रतिक्षण जाग्रत रहना चाहिए, एक क्षण का भी प्रमाद नहीं करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 317

णाणादो जसो, समगिदादो सग्गो, चारित्तादो पुज्जत्तं लहेदि तहा सम्मदंसण-णाण-चारित्ताणं एगत्तं जत्थ होदि तत्थ मोक्खं लहेदि।।

ज्ञान से यश, समकित से स्वर्ग, चारित्र से पूज्यता प्राप्त होती है तथा सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्र तीनों की एकता जहाँ होती है वहाँ मोक्ष प्राप्त होता है।

सम्यक् विचार - 318

जो सच्चत्थ-मग्गम्हि एयग्गत्तादो गच्छेदि, सो हि वीस-वंदणीय-भयवंतो हुवेदि।।

जो सत्यार्थ-मार्ग पर एकाग्रता पूर्वक चलता है। वही विश्व-वंदनीय भगवान् बनता है।

सम्यक् विचार - 319

जो साहगो समत्त-भावेण जीवेदि, सो हि धम्मं पालेदि। समत्तविहीणो धम्म-फलं ण लहेदि।।

जो साधक समता-भाव से जीवन जीता है, वही धर्म का पालन कर सकता है। समता विहीन धर्म के फल को प्राप्त नहीं कर सकता है।

सम्यक् विचार - 320

आदधम्मो मायाचारी-रहिदो। कसाय-बुद्धिवसादो अण्णो मायाचारिं करेदि, तस्स फलं पसुगदी।।

आत्मधर्म मायाचारी रहित होता है। कषाय बुद्धि के वश होकर अज्ञ मायाचारी करता है, उसका फल पशुगति है।

सम्यक् विचार - 321

णाणीजणा तत्थ दिट्ठिं णवि आणेंति, जत्थ अवजस-कारण-भूद-णिमित्ताणि हुंति।।

ज्ञानीजन उस ओर दृष्टि नहीं ले जाते जहाँ अपयश के कारणभूत निमित्त होते हैं।

सम्यक् विचार - 322

साहु-पुरिसस्स पडिक्खणं पडिपलं तमेव कम्मं कादव्वं, जेण धम्म-जस-वड्ढी होदु।

साधु पुरुष को प्रतिक्षण प्रतिपल वही कर्म करना चाहिए जिससे धर्म यश की वृद्धि हो।

सम्यक् विचार - 323

जसो बहु-महत्तपुण्णो। धण-संपत्ति-धरा-लद्धी सारला, किण्णु जीवण-पज्जंतं जसेण सह णिक्कलंक-जीवणं दुल्लहं।।

यश बहुत महत्त्वपूर्ण है। धन, सम्पत्ति, धरती मिलना सरल है, परन्तु जीवन पर्यन्त यश के साथ निष्कलंक जीवन जीना दुर्लभ है।

सम्यक् विचार - 324

सण्णाण-सिद्धीए सदद-सत्थ-सज्झायं कादव्वं।।

सद्ज्ञान सिद्धि हेतु सतत शास्त्र स्वाध्याय करते रहना चाहिए।

सम्यक् विचार - 325

परम-बंभ-आदाणुभूदी खु पराविज्जा, इमाए उवलद्धी बहि-जगदेण णो, सगप्पणाणेण होदि।।

परम ब्रह्म आत्मानुभूति ही परा विद्या है, इसकी उपलब्धि बाह्य जगत् से नहीं स्वात्मज्ञान से होती है।

सम्यक् विचार - 326

सव्वत्थसिद्धिं इच्छेसि दु जसं मा इच्छेहि। जस-कित्ति-उदए पसिद्धी सयमेव होदि। साहणाए खलु सिद्धिप्पसिद्धी होदि।।

सर्वार्थसिद्धि चाहिए तो यश की इच्छा मत करो। यश: कीर्ति के उदय में प्रसिद्धि स्वयमेव होती है। साधना से ही सिद्धि और प्रसिद्धि होती है।

सम्यक् विचार - 327

णिक्कंखिय-भावेण किदा आराहणा-साहणा य कोडि-गुणिदा फलेदि, सिद्धि-कारणं च। साकंखिय-भावेण किदं तवं पुण्णविद्धिं तु कारिज्जदे, किण्णु मुत्तिकारणं णत्थि।।

नि:कांक्षित भाव से की गई आराधना एवं साधना कोटि गुणी फलित होती है, सिद्धि में कारण है। साकांक्षित भाव से किया गया तप पुण्य वृद्धि तो करा सकता है, परन्तु मुक्ति का कारण नहीं बन सकता है।

सम्यक् विचार - 328

सज्जणा धण-धरा-इत्थिं च तत्तियं हि महत्तं दिज्जा, जेण दिग्घसंसार-विद्धी णो हुज्जा।।

सज्जनों को धन-धरती स्त्री को उतना ही महत्त्व देना चाहिए, जिससे दीर्घ संसार की वृद्धि न हो।

सम्यक् विचार - 329

अहो अप्पा। रायवसादु परभावेसुं लित्तो होदूणं णियसहावं मा विसरेहि।।

अहो आत्मन् ! राग के वश होकर परभावों में लिप्त हो निज-स्वभाव को विस्मरण मत करो।

सम्यक् विचार - 330

अहो मित्त! अवरदोस-दंसणं सरलं, णियदोस-दंसणं जडिलं। णियदोसा पस्सित्तु फेडेहि, जेण आदाणिद्दोसो होज्जा।।

अहो मित्र! पर दोष देखना सरल है, निज दोष देखना कठिन है। निज दोषों को देखकर दूर करो, जिससे आत्मा निर्दोष हो जाए।

सम्यक् विचार - 331

धम्म-रहस्सं आगम-णाणादो हि होहिदि, अंतरेण आगमब्भासं धम्मरहस्सं ण जाणिज्जदे।।

धर्म का मर्म आगम ज्ञान से ही होगा, बिना आगमाभ्यास के धर्म के मर्म को नहीं जाना जा सकता है।

सम्यक् विचार - 332

अखंड-चिद-बंभ-णायग-भावो आद-धुवसहावो, एवमेव साहुपुरिसा गेण्हेज्जा। एवं चेव सक्खं आदसिद्धि-पबलकारणं। णायग-साहणाए विणा आदसिद्धी-असंभवा।।

अखण्ड चिद् ब्रह्म ज्ञायक-भाव आत्मा का ध्रुव-स्वभाव है, यही साधु-पुरुषों को स्वीकार करना चाहिए। यही साक्षात् आत्मसिद्धि का प्रबल कारण है। ज्ञायक की साधना के बिना आत्मसिद्धि संभव नहीं है।

सम्यक् विचार - 333

कारण-कज्जस्स सम्मोवओगो मज्झाणं भावेसुं आगच्छेज्जा।।

कारण-कार्य का सम्यक्-प्रयोग हमारे भावों में आना चाहिए।

सम्यक् विचार - 334

माणव-विगास-विणासा माणव-अट्ठाए आधारिदा, तम्हा वीसासो विवरीदो णवि होदव्वो। वीसासो सम्मं तु सयलकज्जाइं समीचीणाइं हुंति।।

व्यक्ति का विकास एवं विनाश व्यक्ति की आस्था पर है, इसलिए विश्वास विपरीत नहीं होना चाहिए। विश्वास सम्यक् है तो सर्वकार्य सम्यक् ही होते हैं।

सम्यक् विचार - 335

जस्स सड्ढाणं दिढं; वीसे कावि सत्ती तं ण भमेदि।।

जिसका श्रद्धान दृढ़ होता है; विश्व में कोई शक्ति उसे विचलित नहीं कर सकती है।

सम्यक् विचार - 336

अट्ठा वरेण्ण-सत्ति त्थि, जा जीवणं महाणत्तं देदि। वीसो रुट्ठो हुज्जा दु चिंतं ण वि कुणेहि, किण्णु सग-परिणामा णो भमेहि।।

आस्था श्रेष्ठ शक्ति है, जो जीवन को महानता दिलाती है। विश्व रुष्ट हो जाए तो चिंता नहीं करना, परन्तु स्व परिणामों को विचलित नहीं करना।

सम्यक् विचार - 337

विहाव-परिणदि-अभावं विणा सहाव-परिणदि-उवलद्धी णत्थि। पडिपलं विहावहेदूओ सया सगीय-आद-रक्खणं कादव्वं।।

विभाव परिणति का अभाव किए बिना स्वभाव परिणति की उपलब्धि नहीं होती है। प्रतिपल विभाव हेतुओं से सदा अपनी आत्म-रक्षा करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 338

सामी-कट्ठं सेवग-गणा णवि सहंते। जे भिच्चा सामी-सुह-दुक्खम्हि सुही-दुही होंति; ते सम्म-सामीभत्त-सेवगा होंति, एरिसेहिं सामी-भत्तेहिं खु देस-धम्म-रट्ठ-सुरक्खा होदि। सामी-दोही-जणेहिं रट्ठ-रक्खा णो होहिदि।।

स्वामी के कष्ट को सेवक गण सहन नहीं कर पाते। जो भृत्य स्वामी के सुख-दु:ख में सुखी-दु:खी होते हैं; वे सच्चे स्वामी भक्त सेवक होते हैं, ऐसे स्वामी भक्तों से ही देश धर्म राष्ट्र की रक्षा होती है। स्वामी द्रोही जनों से राष्ट्र रक्षा नहीं होती।

सम्यक् विचार - 339

भावेसुं विसुद्धि-वेरग्ग-जागरणं होदु दु सिग्घं णिण्णयं किच्चा संजममग्गम्हि आगमेदव्वं। पुणो वरेण्णभावा अणिच्छिदा, तम्हा णवि विलंबेज्जा।।

भावों में विशुद्धि बने, वैराग्य जाग्रत हो तो शीघ्र निर्णय कर संयममार्ग पर अग्रसर हो जाना चाहिए। पुन: श्रेष्ठ परिणाम हुए-न-हुए, इसलिए विलंब नहीं करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 340

मायाभावेण किद-साहणा देव-दुग्गदीए सहायगा, असुहभावादो भगवत्ता-सिद्धी असंभवा।।

माया परिणाम से ही की गई साधना देव-दुर्गति में सहायक है, अशुभ भावों से भगवत्ता की सिद्धि सम्भव नहीं है।

सम्यक् विचार - 341

अंतरिग-वरेण्ण-वियारग-सज्जणो वरेण्णमग्गस्सेव अणुचरेदि।।

आंतरिक श्रेष्ठ-विचारों का धारक सज्जन-मानव श्रेष्ठ-मार्ग का ही अनुसरण करता है।

सम्यक् विचार - 342

जहाभूमिगा पद-अणुऊलत्तणं जाणित्ता सच्चत्थ-मग्ग-रक्खणं साहगस्स वरेण्ण-धम्मो।।

भूमिका अनुसार पद की अनुकूलता को देखकर सत्यार्थ मार्ग की रक्षा करना साधक का श्रेष्ठ धर्म है।

सम्यक् विचार - 343

सम्म-समाहीए सम्मचिंतण-पवित्तभाव-विसुद्धि-विद्धी य अच्चंत-आवस्सगा।।

सम्यक् समाधि के लिए समीचीन चिंतन एवं पवित्र भाव विशुद्धि की वृद्धि अत्यंत आवश्यक है।

सम्यक् विचार - 344

चरिया-किरिया-धम्म-वत्थूणं च आदधम्मस्स जहाजोग्गदा धारणं सद्धाणं च पत्तेग-मुमुक्खुस्स कत्तव्वभूदधम्मो।।

चर्या-क्रिया धर्म और वस्तु का आत्मधर्म योग्यता के अनुसार धारण करना, श्रद्धान करना प्रत्येक मुमुक्षु का कर्तव्यभूत धर्म है।

सम्यक् विचार - 345

धम्मरहस्स-जाणगा सगीय-भाव-विसुद्धीए णवि णस्सेंति, जओ भावविसुद्धि-रक्खणमेव आदधम्म-रक्खणं।।

धर्म का मर्म जानने वाले; स्वकीय भाव-विशुद्धि का नाश नहीं होने देते हैं, क्योंकि भाव विशुद्धि की रक्षा ही आत्मधर्म की रक्षा है।

सम्यक् विचार - 346

चिदबंभ-चेदण्णं एगं, बंधरूवादो अणेगं, एवंविह वीसे वि जीवो एयत्त-अणेयत्तभूदो त्थि।।

चिद्ब्रह्म चैतन्य एक है, बन्ध रूप से अनेक है; इस प्रकार संसार में भी जीव एकत्व-अनेकत्वभूत है।

सम्यक् विचार - 347

तच्चणाणं परमामिद-रसायणं, इमस्स पाणस्स एग-भवो वि अप्पो।।

तत्त्वज्ञान परम अमृत रसायन है, इसके पान के लिए एक भव भी अल्प है।

सम्यक् विचार - 348

आदविसुद्धि-रक्खणं पाणादो वि अहिगं कादव्वं। पाणाणं विओगो दु णियदो, तं को रुंभेहिदि? भव-णिम्मलदा महत्तपुण्णा। एसा भाव-विसुद्धी हि अप्पं परमप्पा करेदि।।

आत्म विशुद्धि की रक्षा प्राणों से भी अधिक करना चाहिए। प्राणों का वियोग तो नियत है, उसे कौन रोक पाएगा? भावों की निर्मलता महत्त्वपूर्ण है, यही भाव विशुद्धि आत्मा को परमात्मा बनाती है।

सम्यक् विचार - 349

वियप्पेसुं जीवणं धम्मप्प-कज्जं णत्थि, वियप्पादो पुहं जीवणं धम्मप्पस्स सम्मुज्जमो।।

विकल्पों में जीना धर्मात्मा का कार्य नहीं, विकल्पों से परे जीवन जीना धर्मात्मा सम्यक्-पुरुषार्थ है।

सम्यक् विचार - 350

वीस-संती सद्देहिं सह, सगीय-भावेसुं संति-ठाविदादो हि होहिदि।।

विश्व शांति मात्र शब्दों से नहीं होगी, स्वकीय भावों में शांति स्थापित करना होगा, तभी विश्व में शांति का संचार होगा।

सम्यक् विचार - 351

अहो मित्त! णिरत्थग-पयारेणं किं लाहो। मा दिस्सेहि, पस्स णियप्पधम्मं।।

अहो मित्र! व्यर्थ के प्रचार से क्या लाभ, दिखाओ मत, निजात्म धर्म को देखो।

सम्यक् विचार - 352

जावं धम्मसरणं तावं अवर-सरणस्स अणावस्सगं। धम्मसरणं हि वरेण्णं, अवर-सरणं खु असरणं।।

जब-तक धर्म की शरण है तब-तक अन्य की शरण की आवश्यकता नहीं है। धर्म की शरण ही श्रेष्ठ है, अन्य शरण अशरण ही हैं।

सम्यक् विचार - 353

समत्त-सब्भावे खलु आदसिद्धी संभवो। लोए जावदिया वि णिग्गंथा सिद्धा जादा भविस्से होहिंति, विदेहक्खेत्तादो संपडियाले वि सिद्ध-परमप्पा हुवेंति ते सव्वस्स समत्त-साहणाए खलु हवेंति अण्णो। कोवि मग्गो णत्थि।।

समत्व के सद्भाव में ही आत्मसिद्धि संभव है। लोक में जितने भी निर्ग्रन्थ सिद्ध हुए हैं, भविष्य में सिद्ध होंगे, विदेह क्षेत्र से सम्प्रति काल में भी सिद्ध परमात्मा हो रहे हैं वे सभी समत्व की साधना से ही होते हैं। अन्य कोई मार्ग नहीं है।

सम्यक् विचार - 354

आदसाहगं धिज्जादो णादा-दिट्ठा होऊणं विरत्त-जीवणमेव सेयं।।

आत्म-साधक को धैर्य पूर्वक ज्ञाता-दृष्टा बनकर विरक्त जीवन जीना ही श्रेयस्कर है।

सम्यक् विचार - 355

भग्ग-ईसरे वीसासो अचलो होदव्वो। भग्गेण सुजोग्गसामग्गी-संजोगो होदि तहा ईसर-भत्ती-आराहणाए भग्ग-णिप्पत्ती होदि।।

भाग्य एवं भगवान् पर विश्वास अटल होना चाहिए। भाग्य से सुयोग्य सामग्री का संयोग होता है और भगवान् की भक्ति आराधना से भाग्य की निष्पत्ति होती है।

सम्यक् विचार - 356

धम्म-धम्मप्पं च पस्सित्तु अणुरायं वड्ढेहि, कम्म-णिज्जरा-साहणं वच्छल्लंगं धारेहि। सगीय-धम्मं पस्स ण दु संबंधिणो।।

धर्म-धर्मात्मा को देखकर अनुराग वर्द्धमान करो; कर्म निर्जरा का साधन वात्सल्य अंग धारण करो, अपने नहीं, अपना धर्म देखो।

सम्यक् विचार - 357

उवएसणं सरलं, किण्णु उवएस-पालणं जडिलं। ते जणा हि सव्वसेट्ठा; जे जह भासेंति तह करेंति वि।।

उपदेश करना सरल है, परन्तु उपदेश पालना कठिन है। वही लोग सर्वश्रेष्ठ हैं; जो जैसा कहते हैं, वैसा करते भी हैं।

सम्यक् विचार - 358

सच्चकहणेण सह, सच्च जीवणं पि जीवेहि।।

सत्य कथन के साथ, सत्य जीवन भी जीना सीखो।

सम्यक् विचार - 359

अणेयंतभूद-पदत्थाणं जदत्थ-अट्ठावंतो हि सम्मादिट्ठी, उहय-मग्गम्हि दोलायमाणो वीसो अवीसासपत्तो, सो मोक्खमग्गे वीसासपत्तो ण होदि।।

अनेकान्तभूत पदार्थों का यथार्थ आस्थावान ही सम्यक्दृष्टि होता है, उभय मार्ग में दोलायमान जगत् अविश्वास का पात्र होता है, वह मोक्षमार्ग में विश्वास का पात्र नहीं हो सकता है।

सम्यक् विचार - 360

अहो पण्ण! वच्छल्ल-णेत्तेणं पस्स, वीसो तुम्हाण मित्तं होहिसि; पुण सत्तुत्त-णामो ण होहिदि।।

अहो प्रज्ञ! वात्सल्य की आँख से देखना सीखो विश्व आपका मित्र हो जाएगा; फिर शत्रुता का नाम ही नहीं रहेगा।

सम्यक् विचार - 361

अहो पण्ण! धम्म-धम्मप्पेहिं सह संधिं सुसिक्ख।।

अहो प्रज्ञ! धर्म-धर्मात्माओं के साथ संधि करना सीखो।

सम्यक् विचार - 362

परप्पओजणेण वावित्तिबुद्धी सगप्पओजणेण अवावित्तिबुद्धिमंतो भव्ववरणाणीजीवो हि कम्मकलंक-खयं करेहिदि, णेव अण्णो।।

पर प्रयोजन से व्यावृत्तिबुद्धि स्व-प्रयोजन से अव्यावृत्ति बुद्धि वाला भव्यवर ज्ञानी जीव ही कर्म कलंक का क्षय कर पाएगा, अन्य नहीं।

सम्यक् विचार - 363

अहो पण्ण! वीसे उवेक्खा भावेणेव सुहवेदणं करेहिसि, अवेक्खा-आगमणे हि कट्ठजूहो आगमेदि।।

अहो प्रज्ञ! विश्व में उपेक्षा भाव से ही सुख का वेदन कर पाएगा, अपेक्षा आते ही कष्टों का यूथ खड़ा हो जाता है।

सम्यक् विचार - 364

तेयाली-धुव-णायगो हि भूदत्थ-अविचलो त्थि सेसा विसेसा णट्ठवंत-पज्जाया संति।।

त्रैकाली ध्रुव-ज्ञायक ही भूतार्थ अविचल है, शेष विशेष नष्ट होने वाली पर्याय हैं।

सम्यक् विचार - 365

सिग्घ-कोवो सिग्घविणासस्स पबल-कारणं, जदि आदरक्खणस्स भावो दु कुविदत्तस्स सिग्घं चागेहि, इमम्हि कल्लाणं।।

शीघ्र कोप शीघ्रविनाश का प्रबल हेतु है, यदि आत्म रक्षा का भाव है तो कुपितता का शीघ्र त्याग कर दो, इसी में भलाई है।

सम्यक् विचार - 366

सज्जणा सया स-पर-हिदसुवियारा करेंति। रट्ठ-देस-धम्म-वीसस्स पाणिमेत्त-हिदं होदु, एरिसं चिंतणं विवेगसीलो हि करेदि।।

सज्जन सदा स्व-पर के हित का सद्-विचार करते हैं। राष्ट्र, देश, धर्म, विश्व के प्राणिमात्र का हित हो ऐसा विवेकशील पुरुष ही विचार पर पाता है।

सम्यक् विचार - 367

मग्ग-मग्गफलं जो जाणेदि; सो मग्गादो कदावि ण चएदि। जं मग्गस्स हि ण बोहो, सो किं मग्गे गच्छेहिदि?।।

मार्ग एवं मार्ग के फल का जो ध्यान रखता है; वह मार्ग से कभी च्युत नहीं होता है। जिसे मार्ग का ही बोध नहीं है वह क्या मार्ग पर चल पाएगा?

सम्यक् विचार - 368

साहुजणा पुरिसत्थादो सम्म-समाहि-अब्भासं करेंति।।

साधुजन पुरुषार्थ पूर्वक सम्यक्-समाधि का अभ्यास करते हैं।

सम्यक् विचार - 369

वीदरायभावेणं विणा मोक्खमग्गो असंभवो। धण्णा धण्णा धण्णा ते जीवा, जे वीदरायभाव-लद्धीय पुरिसत्थं करेंति।।

वीतराग भाव के बिना मोक्षमार्ग असंभव है। धन्य-धन्य-धन्य वह जीव जो वीतराग भाव की प्राप्ति का पुरुषार्थ करते हैं।

सम्यक् विचार - 370

सच्चत्थ-मग्ग-गमणट्ठं विसिट्ठ-पुण्ण-पुरिसत्थाणं आवस्सगत्तं। तिव्व-पुण्ण-पुरिसत्थेणं च विणा सम्म-मग्गे अविरुद्धगमणं असंभवं।।

सत्यार्थ मार्ग पर चलने के लिए विशिष्ट पुण्य एवं पुरुषार्थ की आवश्यकता होती है। तीव्र पुण्य एवं पुरुषार्थ के बिना सम्यक्-मार्ग पर अविरुद्ध गमन असंभव है।

सम्यक् विचार - 371

धम्मो वत्थुसहावो, अंतरेण सहावेण वत्थुस्स वत्थुत्तस्स अत्थित्तं हि णत्थि।।

धर्म वस्तु स्वभाव है, बिना स्वभाव के वस्तु के वस्तुत्व का अस्तित्व ही नहीं होता है।

सम्यक् विचार - 372

परमोसही जिणवयणं, जा जम्म-मरण-वाहि-उवसमणं कारेदि।।

जिन वचन परम-औषधि है, जो कि जन्म-मरण-व्याधि का उपशमन कराती है।

सम्यक् विचार - 373

महुर-मिदु-गंभीर-तच्च-वक्खाणं विसिट्ठ-विज्जा, इमाए विज्जाए णाणिणो सददं अब्भासं कादव्वं।।

मधुर-मृदु-गंभीर तत्त्व का व्याख्यान एक विशिष्ट विद्या है, इस विद्या के लिए ज्ञानियों को सतत अभ्यास करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 374

समया-पुण्ण-पावं च परिणमणसीलं, तम्हा सग-पुरिसत्थेणं सगीय-परिणामा रक्खित्तु अवगमणं विवेगसीलस्स परम-कत्तव्वं।।

समय, पुण्य-पाप परिणमनशील है, इसलिए स्व-पुरुषार्थ से स्वकीय-परिणामों को सँभालकर चलना विवेकशील का परम कर्तव्य है।

सम्यक् विचार - 375

परणिंदाए कुण आदरक्खं, सगणिंदं पडिक्खणं कुण। परणिंदाए णीचगोत्त-कम्मासवो होदि एवं आदणिंदाए पाव-पक्खालणं होदि।।

परनिंदा से आत्मरक्षा करो, स्वनिन्दा प्रतिक्षण करो। परनिन्दा से नीच गोत्र कर्म का आस्रव होता है और आत्मनिन्दा से पापों का प्रक्षालन होता है।

सम्यक् विचार - 376

वेरागीणं वीदरायमग्गो आणंद-मग्गो, किण्णु वेरग्गहीणाणं रयणत्तय-मग्गम्हि आणंदगंधं पि ण आवेदि।।

वैरागियों के लिए वीतरागमार्ग आनन्द का मार्ग है, परन्तु वैराग्य हीनों के लिए रत्नत्रय मार्ग में आनन्द गंध भी नहीं आती है।

सम्यक् विचार - 377

अणंतधम्मप्पग-वत्थुम्हि एयंतधम्म-अणुवलब्धी, एयंतस्स एयंतो असमीचीणो।।

अनन्त धर्मात्मक वस्तु में एकान्त धर्म की अनुपलब्धि है, एकान्त का एकान्त समीचीन नहीं है।

सम्यक् विचार - 378

णियभाव-णियंतणमेव चारित्तुप्पत्ति-वड्ढि-रक्खा-हेदू। णियभाव-विसुद्धि-रक्खणं होदव्वं। णियभाव-रक्खग-णासगो जीवो सयं एव।।

निजभावों का नियंत्रण ही चारित्र उत्पत्ति वृद्धि एवं रक्षा का हेतु है। निजभावों की विशुद्धि का रक्षण होना चाहिए। निजभावों का रक्षक एवं नाशक दोनों जीव स्वयं ही है।

सम्यक् विचार - 379

वेरग्ग-वड्ढीए विद्धजण-सेवा-संगदिं कादव्वं। विद्धजणादो लहेदि अणुहव-णाणं च जेण जीवणं वरेण्णं हुवेदि।।

वैराग्य वृद्धि के लिए वृद्धजनों की सेवा एवं संगति करना चाहिए। वृद्धजनों से अनुभव एवं ज्ञान मिलता है जिससे जीवन श्रेष्ठ बनता है।

सम्यक् विचार - 380

मणुस्सं सारल्ल-लहुत्तं च उत्तमं करेदि। जीवणस्स पत्तेग-परिट्ठिदीए वक्कदा-अहंकारत्तणं ठाणं णो दिज्जा। अहं-वक्कत्ताइं च पदण-कारणाणि, अवगुणाइं च।।

मनुष्य को सरलता एवं लघुता महान् बना देती है। जीवन के किसी भी मोड़ पर वक्रता एवं अहंकारता को स्थान नहीं देना चाहिए। अहं एवं वक्रता पतन के कारण हैं, अवगुण हैं।

सम्यक् विचार - 381

उच्चपदासीणा वि वक्कदा-अहंकारेणं च सगपदेण चुदा होंति।।

उच्च पद पर आसीन व्यक्ति भी वक्रता एवं अहं के कारण स्वपद से च्युत हो जाते हैं।

सम्यक् विचार - 382

झाण-सिद्धीए जोगत्तय-रक्खणं अच्चंत-आवस्सगं। जोग-चंचलत्ते झाणसिद्धी णत्थि।।

ध्यान सिद्धि के लिए योगत्रय की सँभाल अत्यंत अनिवार्य है। योगों की चंचलता में ध्यान सिद्धि नहीं होती है।

सम्यक् विचार - 383

वरेण्ण-साहगं सददं झाण-अब्भासं कुणेदव्वं।

श्रेष्ठ साधक के लिए सतत ध्यान अभ्यास करते रहना चाहिए।

सम्यक् विचार - 384

आद-धम्मस्स परिग्गहस्स किंचिवि आवस्सगत्तं णत्थि, णिस्संगत्तं झाणस्स वरेण्ण-सामग्गी। परिग्गही आदझाणसिद्धिं णो कुणेदि। णिग्गंथमग्गो हि णिस्संग-मग्गो।।

आत्मधर्म के लिए परिग्रह की किञ्चित् भी आवश्यकता नहीं है, नि:संगता ध्यान की श्रेष्ठ सामग्री है। परिग्रही आत्मध्यान की सिद्धि नहीं कर सकता, निर्ग्रन्थ मार्ग ही नि:संग मार्ग है।

सम्यक् विचार - 385

कम्मट्ठिदीए हीणाहिगत्तं कम्माधीणं ण दु सगप्पाधीणं। ठिदिअणु-भागबंधो जीवस्स कसायभावम्हि आधारिदो। कसायो मंदो दु ठिदि-अणुभागो वि मंदो हि होहिदि य कसायो पउरो दु ठिदि-अणुभागो वि पउरो हि होहिदि।।

कर्म स्थिति का घटना-बढ़ना कर्माधीन नहीं स्वात्माधीन है। स्थिति अनुभाग जीव के कषाय भाव पर निर्भर करता है। कषाय मन्द तो स्थिति अनुभाग भी मन्द ही होगा और कषाय प्रचुर है तो स्थिति अनुभाग भी प्रचुर ही होगा।

सम्यक् विचार - 386

आरिस-आगम-रक्खणं पत्तेय-मुमुक्खु-धम्मप्पस्स धम्मो। जदि आगमो हि असुरक्खिदो दु धम्म-सुरक्खणं कहं होदि?।।

आर्ष-आगम की रक्षा करना प्रत्येक मुमुक्षु धर्मात्मा का धर्म है। यदि आगम ही सुरक्षित नहीं रहा तो धर्म की सुरक्षा कैसे हो सकती है।

सम्यक् विचार - 387

आदवेहवं रयणत्तयधम्मो, अण्णं किंचि अचेयण-वत्थुं आदधम्मो णत्थि। चेदण्ण-अणुभूदी एव वेहव-वेदणं। धण्णा धण्णा धण्णा ते णरा, जे रयणत्तय-विभूदीए भूसिदा।।

आत्म वैभव रत्नत्रय धर्म है, अन्य कोई जड़ वस्तु आत्म धर्म नहीं है। चैतन्य की अनुभूति ही वैभव का वेदन है। धन्य-धन्य-धन्य वह नर जो रत्नत्रय की विभूति से भूषित हैं।

सम्यक् विचार - 388

आगमणाणं धम्म-सक्किदि-समाज-देस-रट्ठ-वीसहिदस्स सोवाणं, तम्हा सुदब्भासं सददं कुणेदव्वं।।

आगमज्ञान धर्म, संस्कृति, समाज, देश, राष्ट्र, विश्वहित का सोपान है, इसलिए श्रुताभ्यास सतत करते रहना चाहिए।

सम्यक् विचार - 389

सामग्गी कित्तिया? पस्स गह-जूदं च रायो कित्तियो परिपूरिदा त्थि? दु पस्स मत्थिगं।।

सामान कितना है? घर और बस्ता देखो और राग कितना भरा है? तो मस्तिष्क देखो।

सम्यक् विचार - 390

एयपलं पि सुदं विणयादो सुणेदि दु जीवो अप्प-सयल-पज्जायं धण्णं करेदि।।

एक पल भी श्रुत विनयपूर्वक श्रवण कर लिया तो जीव ने अपनी सर्व पर्याय को धन्य कर लिया।

सम्यक् विचार - 391

पाणिमेत्तं पडि मेत्तीभाव-साहणाए जो जीवो उत्तिण्णो होहिदि, सोचेव आगामीकाले आदसाहणं करेहिदि, अंतरेण मेत्तीभावं आदसाहणा असंभवा।।

प्राणिमात्र के प्रति मैत्रीभाव की साधना में जो जीव उत्तीर्ण हो जाएगा, वही आगामी काल में आत्म साधना कर पाएगा, बिना मैत्रीभाव के आत्म-साधना असंभव है।

सम्यक् विचार - 392

महा-माणवत्त-जीवणं ते हि जिवेंति; जे णाय-णीदीए णादाए सह तदाणुसारेण जीवणं पि जिवेंति।।

महा-मानवता का जीवन वे ही जीते हैं; जो न्याय-नीति के ज्ञाता होने के साथ-साथ तदनुसार जीवन भी जीते हैं।

सम्यक् विचार - 393

सम्मत्तं साहुत्तस्स सेट्ठत्तं उग्घाडेदि। जत्थ सम्मत्त-दंसणं तत्थेव साहुत्तं जीविदं।।

साम्यता साधुता की श्रेष्ठता को उद्घाटित करती है। जहाँ साम्यता के दर्शन हैं, वहीं साधुता जीवित रहती है।

सम्यक् विचार - 394

अहो णाणी! ध्रुवधाम-अविराम-णायग-भावो जीवस्स तेयाली-भावो। इमस्स आसयं लेदूणं जीवणं जीवेहि। परभावो चेदण्णभावो णत्थि, चेदण्ण-भावो जीव-सहावो चेदण्ण-णायग-भावो, अण्ण-भावो णो चेदण्णस्स अणण्णभावो।।

अहो ज्ञानी! ध्रुवधाम अविराम ज्ञायक भाव जीव का त्रैकाली भाव है, इसी का आश्रय लेकर जीवन जीना सीखो। पर भाव चैतन्य भाव नहीं, चैतन्य भाव जीव स्वभाव चैतन्य ज्ञायक भाव, अन्य भाव नहीं चैतन्य का अनन्य भाव।

सम्यक् विचार - 395

आदसाहगं सया रायविद्धीए साहणादो रक्खणं कादव्वं। खणिग-रायो वि आदविसुद्धि-चरियं च भंजेदि। जत्थ आदविसुद्धि-चरियाघादो तत्थ समाहि-घादो सयमेव होहिदि, तम्हा संजम-साहगा रागकारणादु पडिक्खणं रक्खेज्जा।।

आत्म साधक को सदा राग वृद्धि के साधनों से रक्षा करना चाहिए। क्षण भर का राग भी आत्म-विशुद्धि एवं चर्या को भंग कर देता है। जहाँ आत्म विशुद्धि एवं चर्या का घात हुआ वहाँ पर समाधि का घात स्वयं ही हो जाएगा, इसलिए संयम साधकों को राग के कारणों से प्रतिक्षण रक्षा करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 396

जदा तच्चदिट्ठी आदणाणम्हि पवेसेदि, तदा जगदीए सयल-विसया विसरूवा दिस्सेंति। जावं आद-संवित्तीए अजागरणं तावं अण्णाणिं विसयकसाया सुह-अमिद-भूदा दिस्सेंति।।

जिस क्षण तत्त्व दृष्टि आत्म ज्ञान में प्रवेश करती है, तब जगती के सर्व-विषय विष रूप दृष्टव्य होते हैं। जब-तक आत्म संवित्ति का जागरण नहीं है तभी तक अज्ञप्राणी को विषय-कषाय सुख-अमृत भूत दिखते हैं।

सम्यक् विचार - 397

जो सग-भावेसुं पुरिसत्थं करेदि, सो परभावाणं तल्लीणत्तो उस्सरित्तु, सग-पुरिसत्थसिद्धिं लहेदि।।

जो स्व-परिणामों पर पुरुषार्थ कर लेता है, वह पर-भावों की मग्नता से हटकर, स्व पुरुषार्थ सिद्धि को प्राप्त होता है।

सम्यक् विचार - 398

जत्थ सगप्प-णिब्भरत्तं होदि, तत्थ किलेस-दुहाणि सयमेव गच्छंते। दुही ते हि जणा होंति, जे परासय-भावम्हि जिवेंति।।

जहाँ स्वात्म निर्भरता होती है वहाँ क्लेश, दु:ख स्वयमेव ही पलायन कर जाते हैं। दु:खी वे ही लोग रहते हैं जो पराश्रय भाव में जीते हैं।

सम्यक् विचार - 399

पमाण-णय-णिक्खेवा वत्थु-वत्थुत्तं अहिणाणस्स उवाया, इमेहिं तीहिं विणा सच्चत्थ-वत्थुतच्चस्स णिण्णयो ण होदि। वत्थुतच्चणिण्णयं विणा सम्मत्तोवलद्धी ण होदि, सम्मत्ताभावे सयलमोक्खमग्गस्स हि अभावो होदि।।

प्रमाण, नय, निक्षेप वस्तु के वस्तुत्व को जानने के उपाय हैं, इन तीन के बिना यथार्थ वस्तु तत्त्व का निर्णय नहीं हो सकता। वस्तु तत्त्व निर्णय के बिना सम्यक्त्वोपलब्धि नहीं हो सकती, सम्यक्त्व के अभाव में सर्व-मोक्षमार्ग का ही अभाव हो जाता है।

सम्यक् विचार - 400

देह-धम्म-णासगो अबंभभावो। बंभरक्खणं आदरक्खणं, पावरक्खगं सरीररक्खगं च। कम्मबंधेणं आद-जस-रक्खणं। धम्मरक्खणस्स मुक्खसुत्तं बंभभाव-सीलरक्खणं।।

देह एवं धर्म उभय-नाशक अब्रह्मभाव। ब्रह्म रक्षा आत्मरक्षा, पापों से रक्षा शरीर रक्षा। कर्म बंध से आत्म-रक्षा, यश रक्षा। धर्म रक्षा का मुख्य सूत्र ब्रह्म भाव शील रक्षा।

सम्यक् विचार - 401

सच्चत्थ-मग्गे गमणट्ठं चित्तदिढत्तस्स आवस्सगत्तं, अंतरेण दिढधम्मित्तं सच्चत्थमग्गे जीवो णो गच्छेदि।।

सत्यार्थ-मार्ग पर चलने के लिए चित्त ही दृढ़ता की अनिवार्यता है, बिना दृढ़ धर्मी बने सत्यार्थ-मार्ग पर जीव नहीं चल सकता है।

सम्यक् विचार - 402

कामणा-जायणा य साहु-जीवणस्स पदणकारणं। जायगस्स संजम-जस-चारित्तादि पवित्तगुणा विणस्संति।।

कामना, याचना साधु जीवन के पतन का कारण है। याचक के संयम, यश, चारित्रादि पवित्र गुण नष्ट हो जाते हैं।

सम्यक् विचार - 403

सासद-सुहत्थं सयल-वीस-वियप्पाणं चागित्तु वीदराय-मंगलोत्तम-सरणभूद-जिणधम्मस्स सरणं गेण्हेदव्वं।।

शाश्वत सुख चाहते हैं तो सम्पूर्ण जगत् के विकल्पों का त्याग कर वीतराग मंगलोत्तम शरणभूत जिनधर्म की शरण स्वीकार करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 404

अहो पण्ण! सच्चत्थमग्ग-पगासणं कुण, मिच्छामग्गादो पुहं जीवणं जिवेहि।।

अहो प्रज्ञ! सत्यार्थ मार्ग का प्रकाशन करो, मिथ्यामार्ग से पृथक् जीवन जिओ।

सम्यक् विचार - 405

जदा जीवस्स आदपुण्णं पबलं होदि तदा सम्मवियाराणं अंतोकरणे उब्भवो होदि। पुण्णखीणस्स अंतसे आगम-गुरूवएस-अणुहव-सिद्धं।।

जीव का जब आत्म-पुण्य प्रबल होता है तब सम्यक्-विचारों का अंत:करण में उद्भव होता है। पुण्यक्षीण पुरुष के अन्दर श्रेष्ठ विचारों की उत्पत्ति नहीं होती, यह आगम, गुरु-उपदेश तथा अनुभव सिद्ध है।

सम्यक् विचार - 406

अहो अप्पा! सगीय-अप्पाणंदस्स अणुहवं कुणेहि, तुमं सयम्हि भयवंतो।।

अहो आत्मन् ! स्वकीय आत्मानन्द का भाव करो, तुम स्वयं में भगवान हो।

सम्यक् विचार - 407

अहो मित्त! जेण धम्म-जस-देह-वाणी-णाण-धण-णासो णो होदु, सयल-सी-उवलब्धी होदु, एरिसं कज्जं कुणेहि, अण्णं णत्थि अण्णहा णत्थि।।

अहो मित्र! धर्म, यश, देह, वाणी, ज्ञान, श्री (धन) का नाश न हो, सर्वश्री की उपलब्धि हो ऐसा कार्य करो, अन्य नहीं, अन्यथा नहीं।

सम्यक् विचार - 408

अहो अप्पा! पत्तेय-दव्वस्स आदधम्मो तेयालिग-सगंतसे विज्जमाणो, पर-धम्मो वत्थुम्हि ण वि पवेसेदि, सगधम्म-वियोगो णत्थि, वत्थुस्स एरिसं सग-वत्थुत्तं अत्थि।।

अहो आत्मन् ! प्रत्येक द्रव्य का आत्मधर्म त्रैकालिक स्व के अन्दर विद्यमान है, पर-धर्म वस्तु में प्रवेश पाता नहीं, स्वधर्म का वियोग होता नहीं, यही वस्तु का स्व-वस्तुत्व है।

सम्यक् विचार - 409

सम्मवियार-उप्पत्ती पण्णावंत-पण्ण-पुरिस-पण्णाए होदि, पण्णा-पुण्ण-सुण्णा सम्मवियारा णवि उप्पज्जंति।।

सम्यक् विचारों की उत्पत्ति प्रज्ञावन्त प्रज्ञ पुरुषों की प्रज्ञा में ही होती है, प्रज्ञाशून्य एवं पुण्य शून्यों को सम्यक् विचार उत्पन्न नहीं होते।

सम्यक् विचार - 410

अंतोकरणस्स णिम्मलत्तं वत्ति-वत्तित्तस्स परिचायगं। भाव-विसुद्धी, चारित्त-णिम्मलत्तं, णाण-पिवासा य वत्तिं सव्वत्थ महाणत्तं जच्छेदि।।

अंतकरण की निर्मलता व्यक्ति के व्यक्तित्व की परिचायक है। भाव विशुद्धि, चारित्र की निर्मलता, ज्ञान पिपासा व्यक्ति को सर्वत्र महानता प्रदान कराती है।

सम्यक् विचार - 411

धण-पियत्तं णारी-वसत्तं, लोएसणा य आराहग-साहग-सामण्णजणरायाणं सव्वेसिं जसोकित्ति-चारित्त-विसुद्धि-खयं कारेदि। मुमुक्खुजणा परभावादु आदभिण्णत्तस्स कढोर-णिण्णयो आवस्सगो।।

अर्थ (धन) प्रियता, नारी वशता, लोकैषणा आराधक-साधक सामान्य-जन तथा सम्राट् सबकी यश: कीर्ति एवं चारित्र विशुद्धि का क्षय करा देती है। मुमुक्षु जनों को परभावों से आत्म भिन्नत्व का कठोर निर्णय अनिवार्य है।

सम्यक् विचार - 412

आद-साहगं दव्व-भावादो सव्वत्थ कत्ताभावादु सया आदरक्खणं कुणेदव्वं। जावं कत्तत्तं तावं आदसंति-सुगंधं णो आगमेहिदि।।

आत्म-साधक को द्रव्य एवं भावों से सर्वत्र कर्तापन के भाव से सदा आत्म-रक्षा करना चाहिए। जब-तक कर्तापन है तब तक आत्मशान्ति की सुगन्ध नहीं आएगी।

सम्यक् विचार - 413

जगदीए पुण्णणाण-बुद्धि-विवेग-संपण्णं वत्थुं अप्पा। अप्पादु भिण्णाणि सयल-दव्वाणि अणप्पभूदाणि। चेदण्ण-सत्ती अचेदण-दव्वे ण वि होदि, णाण-दंसणमेत्तं आदगुणो।।

जगती पर पूर्णज्ञान, बुद्धि विवेक सम्पन्न कोई वस्तु है तो वह आत्मा है। आत्मा से भिन्न सर्व द्रव्य अनात्मभूत है। चैतन्य शक्ति जड़ द्रव्य में नहीं होती है, ज्ञान-दर्शन एकमात्र आत्मगुण ही है।

सम्यक् विचार - 414

सम्मभावुवलब्धी साहगस्स साहणा। सयल-साहणाए सब्भावो होदु, किण्णु जत्थ सम्मभावाभावो तत्थ सयल-साहणा अकज्जयारी।।

साम्यभाव की उपलब्धि साधक की साधना है। सर्व-साधना का सद्भाव हो, परन्तु साम्यभाव का अभाव जहाँ हो, वहाँ सम्पूर्ण साधना अकार्यकारी है।

सम्यक् विचार - 415

वीसे सव्व-वरेण्ण-संपत्ती सील-रक्खा; णिक्कलंक-णिम्मल-चरिया-धारगो हि सयल-संपत्तीए सामी। वदभंजग-सील-घादगो सयल सत्ति-सुण्ण-दरिद्दी-पुरिसो।।

विश्व में सर्वश्रेष्ठ सम्पत्ति शील-रक्षा है; निष्कलंक निर्मल चर्या का धारक साधक ही सर्व सम्पत्ति का स्वामी है। व्रतभंगी, शीलघातक सर्व शक्ति शून्य दरिद्री पुरुष है।

सम्यक् विचार - 416

आदविगास-धम्मविगासहेदू एयमेत्तं सीलधम्मो।।

आत्म-विकास धर्म-विकास का हेतु एक मात्र शील धर्म है।

सम्यक् विचार - 417

सीलधम्मो अंको; अण्णा सेसा धम्मा सुण्णा, तम्हा अंक-ठाणीय-सीलधम्मरक्खणं पत्तेय-धम्मप्पस्स वरेण्ण-कत्तव्वं।।

शीलधर्म अंक है; अन्य शेष धर्म शून्य, इसलिए अंक स्थानीय शीलधर्म की रक्षा करना प्रत्येक धर्मात्मा का श्रेष्ठ कर्तव्य है।

सम्यक् विचार - 418

कोहो पाणिणो विवेयहीणो करेदि।।

क्रोध प्राणियों को विवेकहीन कर देता है।

सम्यक् विचार - 419

कुविद-पाणी पुव्वावर-विवेगं विसरित्ता अण्णहा कज्जं करेदि, अण्णहा भासेदि, अण्णहा वियारेदि।।

कुपित प्राणी पूर्वापर विवेक को भूलकर कुछ भी कार्य करता है, कुछ भी बोलता है, कुछ भी सोचता है।

सम्यक् विचार - 420

अहो भव्व! कसायो आगमेज्जा; विवेयो गच्छेज्जा दु जाणेहि विवत्तिकालो पचंडो त्थि।।

अहो भव्य! कषाय आने लगे; विवेक जाने लगे, समझो विपत्ति का काल प्रचण्ड है।

सम्यक् विचार - 421

अहो पण्णप्पा! धरणी उक्करवंतं पि आसयं देदि, तुमं मारवंतं पडि वि खमाधारणं कुणेहि।।

अहो प्रज्ञात्मन् ! धरती खोदने वाले को भी आश्रय देती है, तुम सताने वाले के प्रति भी क्षमा धारण करो।

सम्यक् विचार - 422

अहो अप्पा! परकिद-कट्ठाणि खमेहि, विसरणं सव्वसेट्ठं।।

अहो आत्मन्! पर कृत कष्टों को क्षमा कर दो, भुला सको तो बहुत ही अच्छा है।

सम्यक् विचार - 423

हे मित्त! माणो-माणवत्तस्स घोर-अवमाणो; जत्थ माणो तत्थ माणवत्तं रोवेदि।।

हे मित्र! मान मानवता का घोर अपमान है; जहाँ मान वहाँ मानवता बिलखती है।

सम्यक् विचार - 424

माणवस्स पदिट्ठा बहुमुल्लणिही, पदिट्ठाखयं जीवणे सव्वस्स खयं कारेदि, पदिट्ठं णस्सित्तु सुहाकंखा विहा।

मानव के लिए प्रतिष्ठा बहुमूल्यनिधि है, प्रतिष्ठा का क्षय जीवन में सबका क्षय करा देती है, प्रतिष्ठा मिटाकर सुख की आकांक्षा व्यर्थ है।

सम्यक् विचार - 425

वत्तिं विणय-णम्मदा य वरेण्णं कुव्वेदि। पंचपरमेट्ठी-विणयो सव्वसेट्ठ-विणयो।।

व्यक्ति को विनय, नम्रता महान् बना देती है। पंच-परमेष्ठी की विनय सर्व-श्रेष्ठ विनय है।

सम्यक् विचार - 426

अहो अप्पा! जेसिं चारित्तं पवित्तं उच्चं च, तेसिं जसो जीवंतो होदि।।

अहो आत्मन् ! जिनका चारित्र पवित्र एवं उच्च होता है, उन्हीं का यश जीवंत रहता है।

सम्यक् विचार - 427

पव्वयो व्व पहावपुण्णा वि दप्पेण खुद्दत्तं लहेंति। अहंकारिस्स दुग्गदी णिच्छिदा।।

पर्वत जैसे प्रभावशाली भी अहं के कारण क्षुद्रता को प्राप्त हो जाते हैं। अहंकारी की दुर्गति निश्चित ही होती है।

सम्यक् विचार - 428

जसस्सिणो जीवणं हि पदिट्ठा; पदिट्ठाणासं किच्चा जीवणं मिदगादो अहिगं हीणत्तं जुत्तं।।

यशस्वी का जीवन ही प्रतिष्ठा है; प्रतिष्ठा का नाश करके जीना मृतक से अधिक हीनता युक्त है।

सम्यक् विचार - 429

कोमलकेस-रायम्हि रुंभित्तु चामरी-धेणू पाणा णस्सेदि तहा माया-पगडे सदि भयेण अहवा माण-खंडिदे सदि अंहकारी आदघादं करेदि।।

कोमल बालों के राग में फँसकर चामरी गाय प्राण गँवा देती है और छल के प्रकट होने के भय से अथवा मान खण्डित होने पर अहंकारी आत्मघात कर लेता है।

सम्यक् विचार - 430

महाणत्तं सव्वहा विणय-सीलं आडंबरविहीणं च किण्णु छुद्दो अप्प-गुणा वि वित्थारित्तु पदंसणं इच्छेदि।।

महानता सर्वथा विनयशील और आडम्बर विहीन है, परन्तु क्षुद्र थोड़े से गुणों को भी बढ़ा-चढ़ाकर दिखाना चाहता है।

सम्यक् विचार - 431

महाणत्तं सया हि णम्मदा-सज्जणदाए य ववहारं कुणेदि, किण्णु खुद्दत्तं अहंकार-मुत्ती होदि।।

महानता सदैव नम्रता, सज्जनता का व्यवहार करती है, परन्तु क्षुद्रता अहंकार की मूर्ति होती है।

सम्यक् विचार - 432

पेसुण्ण-परणिंदा-चाएणं वीसे गउरवं लहेदि।।

चुगली एवं पर-निंदा त्यागने से विश्व में बड़प्पन मिलता है।

सम्यक् विचार - 433

वच्छल्ल-सज्जणत्त-सुववहार-परगुणगहणत्तण-सच्च-पियत्तं च इमाणि पंच-सुहाचरण-भवणस्स पंचत्थंभाणि संति।।

वात्सल्य, सज्जनता, सद्-व्यवहार, पर-गुण ग्रहणता एवं सत्यप्रियता ये पाँच शुभाचरण-भवन के पाँच स्तंभ हैं।

सम्यक् विचार - 434

मिदुत्त-भावो मज्जव-धम्मो। माणाभावे खु मज्जव-धम्मो संभवो।।

मृदुता का भाव मार्दव धर्म है। मान के अभाव में ही मार्दव धर्म संभव है।

सम्यक् विचार - 435

छलिया-कवडी-मायाचारी-सहावी-मणुस्से वीसासो सगप्पघाद-णिमंतणं ।।

छलिया, कपटी, मायाचारी मनुष्य पर विश्वास करना स्वात्म-हत्या को निमंत्रण देना ही है।

सम्यक् विचार - 436

लोहगार-घणेणं लोहं ताडेदि एवंविह छली-कवडी-मित्तत्तं करवंतं पग-पग-खलणाणि भुंजिज्जदे।।

लुहार के घन से लोहा पिटता है ऐसे ही छली-कपटी की मित्रता करने वाले को दर-दर की ठोकरें खाना पड़ता है।

सम्यक् विचार - 437

सत्तू वीसास-पत्तो णवि होदि, जदि वा सो कमल-पुप्फं हि उवहरेदि।।

शत्रु विश्वास पात्र नहीं होता है, भले ही वह कमल पुष्प ही लाया हो।

सम्यक् विचार - 438

अहो मित्त! तियालं जाणिदूण जीवणं जिवेहि मेत्तं वट्टमाणं पस्सिदूण हि मा जिवेहि।।

अहो मित्र! त्रिकाल समझकर जीवन जिओ, मात्र वर्तमान देखकर ही मत जिओ।

सम्यक् विचार - 439

पर-संपत्तीए अहिगार-अहिलासा कोरवो व्व सव्वणास-कारणं।।

पर-सम्पत्ति पर अधिकार की चाह कौरववत् सर्वनाश की कारण है।

सम्यक् विचार - 440

पावदुक्कम्माणं कुफलं जाणवंतो सज्जणो लोह-कसायस्स पंके णवि रुंभेदि।।

पाप दुष्कर्मों के कुफल को जानने वाला सज्जन मनुष्य लोभ-कषाय के दल-दल में नहीं फँसता।

सम्यक् विचार - 441

आकंखा-णिरोहगो पर-वत्थुं ण पस्सेदि।।

आकांक्षाओं का निरोधक पर-वस्तु पर आँख नहीं डालता।

सम्यक् विचार - 442

पच्छ-सेवणे खलु ओसही कज्जयारी होदि, एवंविह कसायाभावे हि धम्मो सुहयारी होदि।।

पथ्य सेवन करने पर ही औषधि कार्यकारी होती है ऐसे ही कषाय के अभाव में ही धर्म सुखकारी होता है।

सम्यक् विचार - 443

जीवणे अहिगारं लहित्ता अहंकारं ण कुज्जा, जओ समय-परिवट्टणे सदि विलंबो ण होदि। जीवो जदा उच्चपदे होदि तदावि एरिसं दोसं करेदि जं तं अवणदिं देदि।

जीवन में अधिकार प्राप्त करके अहंकार नहीं करना, क्योंकि समय बदलते देर नहीं लगती। व्यक्ति जब उच्च पद पर होता है तभी वह ऐसी भूल करता है जो उसे नीचा दिखा देती है।

सम्यक् विचार - 444

रीदि-णीदि-णादा विवादं ण पत्तेदि, सो णिव्विवाद-जीवणं जिवेदि।।

रीति-नीति का ज्ञाता विवाद को प्राप्त नहीं होता है, वह निर्विवाद जीवन जीता है।

सम्यक् विचार - 445

वियारा सम्माणणीया, किण्णु आयरेण सह वियारा पुज्जत्तं लहंति। वियारेहिं सह आयारो सिद्धि-साहणं हुवेदि। णाणेणं सह किरिया कज्जं साफल्लं करेदि।।

विचार सम्माननीय होते हैं, पर आचरण के साथ विचार पूज्यता को प्राप्त होते हैं। विचारों के साथ आचार सिद्धि का साधन बनता है। ज्ञान के साथ क्रिया कार्य को सफल करती है।

सम्यक् विचार - 446

मेत्तं वियारेण हि सिद्धी असंभवा, जहावियारा चरिचाए अणुसरणं परमसिद्धि-साहणं हुवेदि।।

मात्र विचार-ही-विचारों से सिद्धि संभव नहीं है, विचारों के अनुसार चर्या का अनुसरण परम-सिद्धि का साधन बनता है।

सम्यक् विचार - 447

ओसहि-णाणेण सह सेवणम्हि खु पहाववंता होदि। णाण-मत्तेणं आरोग्गं ण वि होदि, पच्छेण सह ओसह-सेवणेणेव णिरोग्गत्तं लहेदि।।

औषधि का ज्ञान होने के साथ सेवन करने पर ही वह प्रभावशाली होती है। ज्ञान मात्र से रोग ठीक नहीं होता है, पथ्य के साथ औषध सेवन से ही निरोगता प्राप्त होती है।

सम्यक् विचार - 448

सम्म-वियारवंतो सगीय-उवयारी-उवयारं ण विसरेदि।।

सम्यक्-विचारशील अपने उपकारियों के उपकारों को नहीं भूलता है।

सम्यक् विचार - 449

सम्म-वियारो आदसुह-संतीए पबलहेदू। चिंतणं हि वियारा गदिं दिंतेदि।।

सम्यक् विचार - 450

वियारगो आसावादी-ववहार-कुसलो होदि, सो अप्प-सम्म-वियारेहिं सव्वं पहाविदं करेदि।।

विचारक आशावादी और व्यवहार-कुशल होता है, वह अपने सम्यक्-विचारों से सभी को प्रभावित कर लेता है।

सम्यक् विचार - 451

विवेयसील-वियारगो सगीय-वियारेहिं वीस-विक्खादो होदि। वियारा हि उट्ठावेंति पाडेंति वा। वियारा सुरक्खेहि दु आयरणं पि सुरक्खेहिदि।।

विवेकशील विचारक अपने विचारों से विश्व-विख्यात हो जाता है। विचार ही उठाते हैं, विचार ही गिराते हैं। विचारों को सँभाल लो तो आचरण भी सँभल जाएगा।

सम्यक् विचार - 452

देहं रहो, आदा सारही, इंदियाइं रह-वाहगा अस्सा। जदि लक्खलाहं इच्छेहि दु संभलित्तु सम्म-वियारादो अग्गदो वड्ढेहि।।

शरीर रथ है, आत्मा सारथी है, इंद्रियाँ रथ-वाहक घोड़े हैं। यदि लक्ष्य को प्राप्त करना है तो सँभल-सँभल कर, सम्यक्-विचार पूर्वक आगे बढ़ो।

सम्यक् विचार - 453

तिणे ओस-बिंदू मुत्त व्व दिप्पेदि, किण्णु सुज्ज-किरणेण विलीअदि। एवंचेव जोवणावत्था, खणमेत्ते विलीअदि। माणव-जीवण-साफल्लं सम्म-वियारादो जीवणं जीवणे त्ति।।

तृण पर ओस बिंदु मोती-सा चमकता है, पर सूर्य किरण पड़ते ही विलीन हो जाता है। ऐसे ही यौवन अवस्था है, देखते ही देखते विलीन हो जाती है। मानव जीवन की सफलता इसी में है कि सम्यक् विचार पूर्वक जीवन जिओ।

सम्यक् विचार - 454

भूमीए बीयं ण होहिदि दु सस्सं ण होहिदि, जल-उव्वरगं च ण दिंतेहिदि दु सस्सं ण होहिदि, एवंचेव जलं अहिगं दिंतेहिदि दु सस्सं ण होहिदि। तव-साहणाए सह सुवियारो वि होदव्वा, सम्मवियारेण विणा सम्मायरणं असंभवं।।

भूमि में बीज नहीं होता तो फसल नहीं होगी, पानी-खाद नहीं दोगे तो फसल नहीं होगी, पानी अधिक दोगे तो फसल नहीं होगी। ऐसे ही तप-साधना के साथ सुविचार भी होना चाहिए, सम्यक्-विचार के बिना सम्यक्-आचरण संभव नहीं है।

सम्यक् विचार - 455

झाणे हि णाणाणंदं आगमेदि। सम्मवियारा सम्मझाणट्ठं आवस्सगा। विवेयी वियारादो हि धम्माणुट्ठाणं करेदि।।

ध्यान में ही ज्ञान का आनंद आता है। सम्यक्-विचार सम्यक्-ध्यान के लिए आवश्यक हैं। विवेकी विचार-पूर्वक ही धर्म-अनुष्ठान करता है।

सम्यक् विचार - 456

वियार-विगिदी पंथवाद-आदंकवाद-विद्दोह-विद्धंसं चेव जम्मेदि। वियाराणं सम्मं खु बंधेसुं महुरत्तं उप्पादेदि।।

विचारों की विकृति ही पंथवाद, आतंकवाद, विद्रोह और विध्वंस को जन्म देती है। विचारों का साम्य ही सम्बंधों में मधुरता उत्पन्न करता है।

सम्यक् विचार - 457

सोदा णिपुण-बुद्धिमंत-जिण्णासू होहिदि दु उवएसगेणं विसिट्ठ-रहस्समय-वियाराणं अहिवत्ती होहिदि। विसिट्ठ-वियारा वरेण्ण-पुरिसा हि आगमेंति।।

श्रोता प्रौढ़-बुद्धिमान, जिज्ञासु होगा, तो वक्ता के द्वारा विशिष्ट रहस्यमय विचारों की ही अभिव्यक्ति होगी। विशिष्ट विचार महान् पुरुषों को ही आते हैं।

सम्यक् विचार - 458

दाणं विणा सावगधम्मो य झाणज्झयणं विणा समण-धम्मो ण पलेदि।।

दान के बिना श्रावक-धर्म नहीं पलता और ध्यान-अध्ययन के बिना श्रमण-धर्म नहीं पलता।

सम्यक् विचार - 459

सम्मवियार-वागपडुत्त-सम्मभाव-आददिट्ठि-विणयविवेय-अणु-सासण-सारल्लं च जं समया, सोचेव वीसे रज्जं करेदि।।

सम्यक्-विचार, वाक्-पटुता, साम्य-भाव, आत्म-दृष्टि, विनय-विवेक, अनुशासन, सरलता जिसके पास है, वही विश्व पर राज्य करता है।

सम्यक् विचार - 460

ववहार-कुसलत्त-महुर-संभासणेहिं सव्व-कज्जं सुलहत्तेण सिज्झेंति।।

व्यवहार कुशलता एवं मधुर सम्भाषण से सर्वकार्य सुलभता से सिद्ध हो जाते हैं।

सम्यक् विचार - 461

गुरु-वियारेसुं सिस्सं पडिपलं अणुसरेज्जा। गुरु-वियार-अणुसारेण सिस्सजीवणं जिवेहिदि दु णूणं आदोण्णदिं लहेहिदि।।

गुरु के विचारों पर शिष्य को प्रतिपल अनुसरण करना चाहिए। गुरु के विचारों के अनुसार शिष्य जीवन जिएगा तो निश्चित आत्मोन्नति को प्राप्त करेगा।

सम्यक् विचार - 462

भमरोगं सम्म-वियारेहिं हि सुट्ठु किरिज्जदे।।

भ्रम रोग को सम्यक्-विचारों से ही ठीक किया जा सकता है।

सम्यक् विचार - 463

सज्जणा रिणं ण लेदि, जदि गेण्हेदि दु सिग्घं देदि।।

सज्जन पुरुष ऋण नहीं लेता, यदि लेना ही पड़ जाये तो शीघ्र चुका देता है।।

सम्यक् विचार - 464

सरीरं असुइं मलमुत्तपदत्थेहिं संजुत्तं च, इणं पवित्तिकरणस्स एयो हि उवायो, सो सम्मवियारादो सुद्धायरणं।।

शरीर अशुचि मल-मूत्र पदार्थों से संयुक्त है, इसे पवित्र करने का एक ही उपाय है, वह है सम्यक्-विचार पूर्वक शुद्धाचरण।

सम्यक् विचार - 465

विगारी एव भिक्खुगो होदि। वियारवंत-विवेयी वियारेहिं सह पवित्तजीवणं जिवित्तु पुज्जं हवेदि।।

विकारी ही भिखारी होता है। विचारवान विवेकी विचारों के साथ पवित्र जीवन जीकर पूज्य बन जाता है।

सम्यक् विचार - 466

णिच्छल-उक्किट्ठ-वियारगो सोचेव होदि; जो वियारग-अणुसारेण चरिचाए य चरिचाणुऊल-चरियाए पवित्त-पालणं करेदि।।

सच्चा और अच्छा विचारक वही होता है; जो विचारकों के अनुसार चर्चा और चर्चा के अनुकूल चर्या का पवित्र पालन करता है।

सम्यक् विचार - 467

समयो बहुमुल्लो; पुव्वेज्जू पुणो ण पत्तेदि, तम्हा पडिपलं सग-कल्लाण-भावणादो संभलित्तु जीवणं जिवेहि।।

समय बहुमूल्य है; बीता हुआ समय पुन: नहीं प्राप्त होता है, इसलिए प्रतिपल स्व-कल्याण की भावना पूर्वक, सँभल-सँभलकर जीवन जियें।

सम्यक् विचार - 468

सया सगीय-लक्खं पस्सेहि, कोवि तुए संगं पि ण दिज्जा पुणो वि दिढो हुज्जा परिस्समो कदावि णो होदि विहा, अब्भास-पुरिसत्थं च कुण एयदिणं साफल्लं अवस्सं लहेदि।।

हमेशा अपने लक्ष्य पर दृष्टि रखो, कोई तुम्हारा साथ भी न दे फिर भी दृढ़ रहो, परिश्रम कभी व्यर्थ नहीं जाता, अभ्यास एवं पुरुषार्थ करते रहो एक दिन सफलता अवश्य मिलेगी।

सम्यक् विचार - 469

अवर-णिंदा पावं जो अवराणं णिंदं करेदि, सो सयमेव हि अवणदिं लहेदि। परणिंदगस्स भावविसुद्धी विलीअदि।।

पर की निन्दा करना पाप है, जो दूसरों की निंदा करता है वह स्वयमेव ही अवनति को प्राप्त होता है। पर निंदक की भाव-विशुद्धि विलीन हो जाती है।

सम्यक् विचार - 470

जीवणं खण-भंगुरं, संजोगा सिविणमिव जोवणं जलबिंदु व्व तम्हा चेदण्णणिहिं पस्स। आदा सासदं दव्वं; सो हुवीअ अत्थि य सया हुवेहिदि।।

जीवन क्षण भंगुर है, संयोग स्वप्नवत् हैं, यौवन जल बिंदु के समान है, इसीलिए चैतन्य निधि पर दृष्टिपात करो। आत्मा शाश्वत द्रव्य है; वह था, है और हमेशा रहेगा।

सम्यक् विचार - 471

तिण्हा असंतीए हेदू, संतोसो संतीए परमहेदू।।

तृष्णा अशांति का हेतु है, संतोष शांति का परम हेतु है।

सम्यक् विचार - 472

णाणी पडिपलं णिय-सहावम्हि दिट्ठिं धरेदि एवं अण्णाणी पडिपलं परपदत्थेसुं हि दिट्ठिं धरेदि।।

ज्ञानी हर पल निज-स्वभाव पर दृष्टि रखता है और अज्ञानी प्रतिपल बाह्य पर-पदार्थों पर ही दृष्टि लगाता है।

सम्यक् विचार - 473

अत्थेणेव अणत्थो होदि। धणज्जणे कट्ठं, धण-रक्खणे सकिलेसत्तं तहा धणक्खये चिंता, तम्हा धम्मादु मुंचिदूण धणसंगहं मा कुण।।

अर्थ से ही अनर्थ होता है। धन के अर्जन में कष्ट, धन के रक्षण में संक्लेशता और धन क्षय पर चिंता, इसीलिए धर्म को छोड़कर धन संग्रह मत करो।

सम्यक् विचार - 474

जगदीए अणेय-जीवा अणेय-जीवाणं अणेयाणेय-वियारा संति। आदसंतिं इच्छेसि दु पओजणभूदवियारा गेण्हेहि, सेसं सिग्घं मुंचेहि।

दुनिया में अनेक जीव हैं, अनेक जीवों के अनेकानेक विचार है। आत्मशांति की चाह है तो प्रयोजनभूत विचारों को ग्रहण करो, शेष को शीघ्र छोड़ दो।

सम्यक् विचार - 475

जदि बहिर-पदत्थेसुं दिट्ठी गच्छेदि दु णियादाणंद-वेदणं ण करेहिसि। आददिट्ठी एव संतिउवायो।।

यदि बाह्य पदार्थों पर दृष्टि जा रही है, तो निज आत्मानंद का वेदन नहीं कर सकोगे। आत्म दृष्टि ही शांति का उपाय है।

सम्यक् विचार - 476

वीस-परिवट्टणस्स वियारं मा कुण, सगं परियट्ट इमम्हि सारो।।

दुनिया को बदलने का विचार मत करो, स्वयं को बदलो इसी में सार है।

सम्यक् विचार - 477

वीसस्स चरियाओ विरामं दित्तु, णियप्पे दिट्ठिं कुण। एयत्त-विहत्तस्स चरिचं कुण, णिय-णायगं जाणेहि।।

दुनिया भर की चर्चाओं को विराम देकर, निजात्म पर दृष्टि लगाओ। एकत्व-विभक्त की चर्चा करो, निज ज्ञायक को समझो।

सम्यक् विचार - 478

चंदणस्स णो आदणाणीणं संगदी आणंदेदि, जओ आदसहावो खलु परम-सीयलो। आदझाणिं चंद-चंदणस्स सीयलत्तं ण तुस्सेदि।।

चंदन की नहीं आत्म ज्ञानियों की संगति आनंद देती है, क्योंकि आत्म स्वभाव ही परम-शीतल है। आत्म ध्यानी को चंद्रमा और चंदन की शीतलता संतुष्ट नहीं कर पाती है।

सम्यक् विचार - 479

आदहिदेसिं पर-पदत्थ-णाणेणं कोवि लाहो णत्थि, अदो णियं जाण संबोह संभल एवं णियप्पसुहस्स पुरिसत्थं कुण।।

आत्म हितैषी को पर-पदार्थों को जानने से कोई लाभ नहीं, अत: निज को जानो, निज को समझो, निज को सँभालो और निजात्म सुख का पुरुषार्थ करो।

सम्यक् विचार - 480

मदिरेव मोहो मोहेदि। मोह-वसादो माणवो भवे भवे भमिदूण पचंड-दुक्खाणि पत्तेदि। मोहं मुंच, समत्तं-धार।।

मदिरा के समान मोह मुदित कर देता है। मोह के वश मानव भव-भव में भ्रमण कर भयंकर दु:खों को प्राप्त करता है। मोह छोड़ो, समता धारण करो।

सम्यक् विचार - 481

अंतोदिट्ठी सया सुही। सो णिय-णायगो परमप्पस्स आसएदूणं णिय-परमप्पं पयडेदि। णियं झाहि, णियं पावेहि।।

अन्तर्दृष्टि सदा सुखी रहता है। वह निज-ज्ञायक परमात्मा का आश्रय लेकर निज परमात्मा को प्रकट कर लेता है। निज को ध्याओ, निज को पाओ।

सम्यक् विचार - 482

सम्म-वियारा हि सदायारी कुणंति, तम्हा वियार-पवित्तं कुणेहि।।

सम्यक्-विचार ही सदाचारी बनाते हैं, इसीलिए विचारों को पवित्र रखो।

सम्यक् विचार - 483

एरिसं भासेहि जेण सव्वं संभलेज्जा, एरिसं लिहेहि जेण परोप्परे सव्वं मिल्लेज्जा।।

ऐसा बोलो जिससे सभी सँभल जायें, ऐसा लिखो जिससे परस्पर सभी मिल जायें।

सम्यक् विचार - 484

जेण सच्चत्थबोहो, आदसोहो होदु तमेव सच्चणाणं। चरिचाए सह चरिया वि होदव्वा।।

जिससे सत्यार्थ बोध हो, आत्मा का शोध हो वही सच्चा ज्ञान है। चर्चा के साथ चर्या भी होना चाहिए।

सम्यक् विचार - 485

तमेव णाणं णाणं जम्हि आणंदो होदु, आदा विसुद्धो होदु मोक्खमग्ग-पसत्थो होदु।।

वही ज्ञान-ज्ञान है जिसमें आनन्द हो, आत्मा विशुद्ध हो, मोक्षमार्ग प्रशस्त हो।

सम्यक् विचार - 486

वच्छल्ल-मित्ती-सुण्ण-माणवो सुक्ख-सरोवरो व्व णिरत्थगो।।

वात्सल्य, मैत्री से शून्य मानस सूखे-सरोवर के समान व्यर्थ है।

सम्यक् विचार - 487

आद-सम्मुह-दिट्ठीए सह पउत्ती णिच्छएण णाणं झाणं च। णाणेणेव झाणं संभवं। झाणं हि सिद्धीए सक्खं कारणं।।

आत्म-सन्मुख दृष्टि के साथ प्रवृत्ति ही निश्चय से ज्ञान और ध्यान है। ज्ञान से ही ध्यान संभव है। ध्यान ही सिद्धि का साक्षात् कारण है।

सम्यक् विचार - 488

सग-सम्मुह-झाणं हि परमाणंदो। सत्थ-सज्झाय-फलं पि झाणं हि जाण। बंभचेरं विणा झाणसिद्धी असंभवा। जदत्थे सगप्पसरूवे थिरत्तं हि बंभचेरं।।

स्व-सन्मुख ध्यान ही परमानंद है। शास्त्र-स्वाध्याय का फल भी ध्यान ही जानो। ब्रह्मचर्य के बिना ध्यान सिद्धि असंभव है। यथार्थ में स्वात्म स्वरूप में स्थिर होना ही ब्रह्मचर्य है।

सम्यक् विचार - 489

णाण-वेरग्ग-सत्ती खु सिवत्तं पडि उट्टावेदि। संसार-देह-भोयादु उदासीणत्तं एव वेरग्गं। सपर-भेदणाणं हि सच्चत्थणाणं।।

ज्ञान-वैराग्य शक्ति ही शिवत्व की ओर प्रेरित करती है। संसार, शरीर और भोगों से उदासीनता ही वैराग्य है। निज-पर का भेद जानना ही यथार्थ ज्ञान है।

सम्यक् विचार - 490

वाणीए णियंतणं होदव्वं, णवरि कडुवयणाइं सरेणं पि अहिग-तिक्खणग्ग-कट्ठपदाणि होंति।।

वाणी पर नियंत्रण रखना चाहिए, क्योंकि कटु वचन बाण से भी अधिक नुकीले और कष्टप्रद होते हैं।

सम्यक् विचार - 491

जियेहि वा जीवावेहि। सग-जीवणट्ठं अवर-पाणा मा गेण्हेहि।।

जिओ और जीने दो। अपने जीने के लिए दूसरों के प्राण मत लो।

सम्यक् विचार - 492

णस्सर-देहे रायं मा कुण। देहरायो अग्गीव जो पुण्णं दाहित्तु धंसेदि।।

राख होने वाले पर राग मत करो। शरीर का राग आग के समान है, जो पुण्य को जलाकर खाक कर देता है।

सम्यक् विचार - 493

कुण वियारं; किं संगे आहरीअ? किं किं संगे लेदूणं गच्छेहिदि?।।

विचार करो; क्या साथ लाए थे? क्या-क्या साथ लेकर जाओगे?

सम्यक् विचार - 494

थोवं भासेहि, मोणब्भासं कुण। थोवं सुणेहि, किण्णु सम्म-चिंतणं कुणेहि। थोवं भुंजेहि किण्णु संतुलिद-सुद्ध-सागाहारं कुणेहि।।

कम बोलो, मौन का अभ्यास करो। थोड़ा सुनो, पर सम्यक्-चिंतन करो। कम खाओ, पर संतुलित शुद्ध शाकाहार करो।

सम्यक् विचार - 495

समीचीण-चिंतणे सदि हु मणुस्स-जीवणं वरेण्णं होदि। सम्म-चिंतणं वीस-उण्णदि-कारणं।।

विचार सम्यक् होने पर ही मनुष्य का जीवन महान् बनता है। सम्यक् सोच विश्व उन्नति का कारण है।

सम्यक् विचार - 496

सम्म-चिंतण-जुत्तमाणवो हि सपरहिदकारगो तहा वियाराणं उच्चत्तेणेव माणवो महा-माणवसण्णं पत्तेदि।।

सम्यक्-विचार युक्त मानव ही स्व-पर हितकारक होता है और विचारों की उच्चता से ही मानव महा-मानव संज्ञा को प्राप्त करता है।

सम्यक् विचार - 497

लहु-चिंतणाइं लहुत्तं पडि णेंति, चिंतण-पहुत्तं वत्तिं पहुत्तं जच्छेदि।।

लघु-विचार लघुता की ओर ही ले जाते हैं, विचारों की प्रभुता व्यक्ति को प्रभुता प्रदान करती है।

सम्यक् विचार - 498

सया एरिसं पुरिसत्थं कुण जेण चिंतण-धारा खुद्दत्तं ण लहित्तु वड्ढमाणत्तणं लहेज्जा। वीस-विगासे; वीसहिदे-सगविगासे-सगहिदे य चिंतण-धारा पवट्टिज्जदे।।

हमेशा ऐसा पुरुषार्थ करो जिससे विचार-धारा क्षुद्रता को प्राप्त न कर; वर्धमानता को प्राप्त करे। विश्व विकास; विश्वहित, स्व विकास, स्वहित पर ही विचार धारा प्रवाहित रहे।

सम्यक् विचार - 499

वीसे सत्तु-मित्त-संखा-वड्ढगं जदि किंपि कारणं तु सो वत्तिस्स कुवियारो सुवियारो य। चिंतण-णिम्मलत्तं मित्ताणि जम्मेदि, चिंतण-कालुस्सत्तं सत्तु-संखा वड्ढावेदि। णिण्णयं सगं कुणेहि; तुमं सत्तुं इच्छेसि वा मित्तं? जो सो दु सो अत्थि।।

विश्व में शत्रु एवं मित्रों की संख्या वृद्धि कराने वाला यदि कोई कारण है तो वह व्यक्ति के कुविचार और सुविचार। विचारों की निर्मलता मित्रों को जन्म देती है, विचारों की कलुष्यता शत्रुओं की संख्या वृद्धि कराती है। निर्णय स्वयं करो; आप शत्रु चाहते हैं या मित्र? जो है सो है।

सम्यक् विचार - 500

सम्म-चिंतणाइं ताइमेव संति जम्हि देस-रट्ठ-वीस-धम्म-सक्कदि-अप्पहिदं च णिहिदाइं। तमेव सुचिंतणं; जं सपरकल्लाणकारगं होदु तहा जस्स वीसो सम्माणं कुणेहि।।

सम्यक्-विचार वे ही हैं जिसमें देश, राष्ट्र, विश्व, धर्म, संस्कृति एवं स्वयं का हित निहित हो। वही सुविचार है; जो स्वपर कल्याणकारक हो और जिसका विश्व सम्मान करे।

सम्यक् विचार - 501

वियार-उक्किट्ठत्तं हि वत्तिस्स उक्करिसं कारेदि। वियारसीलत्तं हि माणवत्त-चिण्हं। जत्थ वियारसीलत्तं तत्थेव तत्थेव विगाससीलत्तं होहिदि।।

विचारों की उत्कृष्टता ही व्यक्ति का उत्कर्ष कराती है। विचारशीलता ही मानवता की पहचान है। जहाँ विचारशीलता होगी वहीं-वहीं विकासशीलता होगी।

सम्यक् विचार - 502

वियार-उज्जलत्तेणेव चारित्ते उज्जलत्तं आगच्छेदि, तम्हा सग-वियार-उज्जलं कुणहि। उज्जल-वियारो एवं उज्जल-जीवणं माणवत्तसिंगारो।।

विचारों की उज्ज्वलता से ही चारित्र में उज्ज्वलता आती है, इसीलिए अपने विचारों को उज्ज्वल बनाकर रखो। उज्ज्वल विचार एवं उज्ज्वल जीवन मानवता का शृंगार है।

सम्यक् विचार - 503

वियाराणुसारेण वत्तिस्स चित्तं आचरणे पउत्तेदि। वत्थुविवत्था ववट्ठिदा, वत्तिस्स वियारधाराए हि तं वत्थुं दिस्सेदि, किण्णु वत्थुं सया वत्थुभूदं।।

विचारों के अनुसार व्यक्ति का चित्त आचरण में प्रवृत्त होता है। वस्तु व्यवस्था व्यवस्थित है, व्यक्ति की विचार धारा पर ही उसे वस्तु दिखाई देती है, परन्तु वस्तु सदा वस्तुभूत है।

सम्यक् विचार - 504

वियाराणुसारेण वत्तिस्स वत्तित्त-रयणा होदि। वियारा विसाला संति दु वत्तित्ते विसालत्तं आगमेदि तहा वियारातुच्छा दु वत्तित्तं पि लहुं होदि।।

विचारों के अनुसार व्यक्ति के व्यक्तित्व की रचना होती है। विचार विशाल है तो व्यक्तित्व में विशालता आती है और विचार तुच्छ हैं तो व्यक्तित्व भी छोटा हो जाता है।

सम्यक् विचार - 505

उच्च-वत्तित्तवंत-महापुरिस-वियारा वि उच्चसेणीए हुंति तदणुसारेण जीवणसेली-कज्जपडुदा-कज्जपद्धदी होदि। वियारधारा-अणुसारेण जीवणधारा पवट्टेदि।।

उच्च व्यक्तित्व वाले महा-पुरुषों के विचार भी उच्च स्तर के होते हैं; तदनुसार जीवन-शैली कार्य-क्षमता, कार्य पद्धति होती है। विचारधारा के अनुसार जीवन धारा प्रवाहित होती है।

सम्यक् विचार - 506

वियार-सेट्ठत्तं विणा सेट्ठजीवणं ण सिज्झेदि। एवमेव धुवसच्चं।।

विचारों की श्रेष्ठता के बिना श्रेष्ठ जीवन नहीं बन सकता। यही ध्रुव सत्य है।

सम्यक् विचार - 507

सेट्ठ-जीवणट्ठं सेट्ठ-वियारा-सगंतसे ठाणं दिंतेज्जा। वियारा हि विगासं गदिं देंति।।

श्रेष्ठ जीवन के लिए श्रेष्ठ-विचारों को स्वयं के अन्दर स्थान देना होगा। विचार ही विकास को गति प्रदान करते हैं।

सम्यक् विचार - 508

सेट्ठ-वियारगाणं वियारज्झयणं कुणेज्जदे। सेट्ठ-आयारग-वियारग-सुसंगदिं गहेदव्वं। वियार-आदाण-पदाणं सपरस्स एवं णिहिल-सक्किदीए हिदप्पदं होहिदि।।

श्रेष्ठ-विचारकों के विचारों का अध्ययन करते रहना चाहिए। श्रेष्ठ आचारक-विचारकों की सत्संगति प्राप्त करना चाहिए। विचारों का आदान-प्रदान स्व-पर के लिए एवं सम्पूर्ण-संस्कृति के लिए हितप्रद होगा।

सम्यक् विचार - 509

सेट्ठ-वियारग-संमेलणं सक्किदीए उत्थाणकारणं सिज्झदि तम्हा लोयहिद-परमत्थहिद-उहय-हिदत्थं संकोयं विणा, स-परहिदत्थं परोप्पर-संजोगो होदव्वो।।

श्रेष्ठ-विचारकों का मिलन संस्कृति के उत्थान का कारण बनता है, इसीलिए लोकहित, परमार्थहित, उभय हित देखते हुए संकोच किए बिना, स्व-पर हितार्थ परस्पर मेल-मिलाप होना चाहिए।

सम्यक् विचार - 510

संजोगो सत्तुत्त-घादगो, हिदय-कालुस्सत्त-णासगो एवं धम्म-मग्ग-पहावणाए वि साहणं।।

मिलन शत्रुता का घातक है, हृदय की कलुष्यता का नाशक है एवं धर्म-मार्ग की प्रभावना का भी साधन है।

सम्यक् विचार - 511

वियारेसुं ममत्तभावो संबंध-जणगो। ममत्ते जीवो मोहित्तु बंधं पत्तेदि एवं सो हि बंधो कट्ठमूलकारणं।।

विचारों में ममत्व भाव संबंधों का जनक है। ममत्व में व्यक्ति मोहित होकर बंध को प्राप्त होता है और वही बंध कष्ट का मूल कारण है।

सम्यक् विचार - 512

मोहवसादो माणवो असुह-भावेहिं, असुह कम्मासव-बंधं किच्चा, असुह-कम्म-विवागं गहित्तु भव-भमणं किच्चा घोर-कट्ठाणि पत्तेदि।।

मोह के वश मानव अशुभ-भावों के द्वारा, अशुभ कर्मों का आस्रव-बंध कर, अशुभ कर्म-विपाक को प्राप्त कर भव-भ्रमण कर, भयंकर कष्टों को प्राप्त करता है।

सम्यक् विचार - 513

असुहवियारधारा-फलं दुक्खदं हि होदि, दुक्ख-संताव-बुद्धिहासो, सव्वे कुवियाराणेव फलं।।

अशुभ विचार धारा का परिणाम दु:खद ही होता है; दु:ख-संताप, बुद्धि का ह्रास यह सब कुविचारों का ही फल है।

सम्यक् विचार - 514

वियारहीणो विवेगबुद्धिं णस्सिदूण दुहं हि पावेदि। तिव्वकम्मोदये जीवो कट्ठं सहंतं पि कुकिच्चाणि ण मुंचेदि।।

विचार-हीन विवेक-बुद्धि का नाशकर दु:ख-ही-दु:ख प्राप्त करता है। तीव्र कर्मोदय में जीव कष्ट सहन करता हुआ भी कु-कृत्यों को छोड़ नहीं पाता है।

सम्यक् विचार - 515

सगोवयारे वियारगा लोए विउला, किण्णु सव्व जीवोवयारस्स वियारगा पुढवीए अच्चंत-णूणा । साहुजणाणं चिंतणं सव्वजणहिदत्थं एवं सव्व-कल्लाणमयं होदि।।

स्वोपकार पर विचार करने वाले विचारक लोक में बहुत हैं, परन्तु सर्व जीवों के उपकार का विचार करने वाले पृथ्वी पर अत्यन्त न्यून हैं। साधुजनों का सोच सर्वजन हिताय एवं सर्व कल्याणमय होता है।

सम्यक् विचार - 516

जगदीए जित्तिया जीवा; ते परोप्परे कहंचिद काल-खेत्तेसुं उवयारी हुंति। कदा कम्हि काल-खेत्त-भवम्हि को कस्सचिद उवयार-अवयारं च करेदि, तम्हा सव्वं पडि मित्तीभावं ठावेज्जा य सत्तुभाव-परिचागं कुज्जा। आदसुह-संतीए एव्व एयो सेट्ठ-उवायो, इमेण उवायेण सव्वहिदं होहिदि।।

जगती में जितने प्राणी हैं; वे परस्पर किसी-न-किसी काल, क्षेत्र में काम आते ही हैं। कब किस काल क्षेत्र एवं भव में कौन किसका उपकार अपकार करता है, इसीलिए सभी के प्रति मैत्री-भाव स्थापित करना चाहिए और शत्रुभाव का परित्याग कर देना चाहिए। आत्मसुख एवं शांति का यही एक श्रेष्ठ उपाय है, इसी उपाय से सर्वहित होगा।

सम्यक् विचार - 517

दयाभावो हि सेट्ठो; कूरत्तं ण णियट्ठं वरं णेवं अवरट्ठं।।

दयाभाव ही श्रेष्ठ है; क्रूरता न स्वयं के लिए अच्छी है और न ही दूसरों के लिए।

सम्यक् विचार - 518

सत्तुत्तं भयसण्णं जम्मेदि। सत्तुत्तभावो सुहसंतिं विणस्सेदि। तस्स माणवत्त-अणुभूदि-खयं होदि, पुणो तं पडिखणं संकिलेसत्तभावो संजायदे।।

शत्रुता भय संज्ञा को जन्म देती है। शत्रुता का भाव सुख-शांति को नाश कर देता है। उसकी मानवता की अनुभूति का क्षय हो जाता है, फिर उसे प्रतिक्षण संक्लेशता का भाव जाग्रत होता है।

सम्यक् विचार - 519

धम्म-सक्किदि-समाय-देस-रट्ठहिद-वियारा खलु सम्माणं दिज्जा। सव्वलोयाणंदं लहेदु समाय-रट्ठ-उत्थाणं होदु; एरिसा सुवियारा सिलाघणीया।।

धर्म, संस्कृति, समाज, देश, राष्ट्रहित के विचारों को ही सम्मान देना चाहिए। सर्व लोक आनन्द को प्राप्त हो, समाज-राष्ट्र का उत्थान हो ऐसे सद्-विचार ही स्तुत्य है।

सम्यक् विचार - 520

वियार-अपुण्णत्तं हि विभिण्ण-पंथा ठवेदि। समीचीण-वियारो हि विगाससीलत्ते कारणं, तम्हा सगीय-वियारा विसालत्तं दिंतेहि। वियारधारा खलु महाणो कुव्वेदि।।

विचारों की अपूर्णता ने ही विभिन्न-पंथों को स्थापित किया है। सही विचार ही विकासशील बनाता है, इसीलिए अपने विचारों को विराटता प्रदान करो। विचार धारा ही महान् बनाती है।

सम्यक् विचार - 521

वत्तिं सग-जीवणेण सह अवर-जीवणे वि सम्मवियारं कादव्वं। देसे पण्णा हि ण होहिदि दु रज्जं कम्हि होहिदि? सुहमय-रज्जं तेसिं होंति, जे पया-पालणं सग-देहो व्व करेंति।।

व्यक्ति को स्व जीवन जीने के साथ दूसरे के जीवन पर भी सम्यक्-विचार करना चाहिए। देश में प्रजा ही नहीं रहेगी तो राज्य किस पर होगा? सुखमय राज्य उन्हीं को चलता है, जो प्रजा का पालन स्व-शरीरवत् करते हैं।

सम्यक् विचार - 522

राअं सव्वस्स धम्मिग-भावणाणं सुरक्खेदव्वं सच्चाहिंसाचोरिय-बंभचेरपरिग्गेसुं लक्खेदव्वं। सयल-संपदाया पडि सब्भावो होदव्वो।।

सम्राट् को सभी की धार्मिक-भावनाओं की रक्षा करना चाहिए। सत्य, अहिंसा, अचौर्य, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह पर लक्ष्य रखना चाहिए। सर्व-सम्प्रदायों के प्रति सद्भाव होना चाहिए।

सम्यक् विचार - 523

अणादंक-रज्ज-संचालगो मरणोवरंतं पि जगदीए हिदयेसुं णिवसेदि।।

अनातंक राज्य-संचालक मरण के उपरान्त भी जगती के हृदयों में निवास करता है।

सम्यक् विचार - 524

हिदय-विसालत्तं वियार-सीलत्ते णिब्भरं। जस्स हिदयं जित्तियं विसालं तस्स वियारसत्ती वि उत्तिया हि अहिग-विगसिदा होहिदि।।

हृदय की विशालता विचार-शीलता पर निर्भर होती है। जिसका हृदय जितना विशाल होगा उसकी विचार-शक्ति भी उतनी ही अधिक विकसित होगी।

सम्यक् विचार - 525

हिदयहीणत्तं वियारा संकुचेदि, जस्स वियारा संकुचिदा सो कदावि वीस-रट्ठ-समाय-परिवारेसुं अखंडत्तं ण ठावेदि।।

हृदय की हीनता विचारों को संकुचित कर देती है, जिसके विचार संकुचित है वह कभी भी विश्व-राष्ट्र-समाज व परिवार में अखण्डता स्थापित नहीं कर सकता है।

सम्यक् विचार - 526

एयत्तं ठाविदत्थं वियारेसुं विसालत्तं ठाणं देदि। वीस-बंधुत्त-वीसएयत्त-अखंडत्तं च वच्छल्लपुण्य-वियारेहिं हि संभवं।।

एकता स्थापित करना है तो विचारों में विशालता को स्थान दो। विश्व बंधुता, विश्व एकता, अखण्डता वात्सल्य पूर्ण विचारों से ही संभव है।

सम्यक् विचार - 527

पाणिमेत्तं पडि मेत्तीभावो, पण्णाए सुहदुहम्हि सहभागिदा, जहाजोग्ग जहासमय सहजोगभावगो, पबुद्ध-तच्चणाणी, सुदब्भासी, संजमी, परभावादु णिप्पुह-जीवणं जियवंतो वियारगो हि वीस-अखंडत्तं ठावेदि।।

प्राणिमात्र के प्रति मैत्री भाव, प्रज्ञा के सुख-दुःख में सहभागिता, यथायोग्य यथा-समय सहयोग की भावना रखने वाला, प्रबुद्ध तत्त्वज्ञानी, श्रुताभ्यासी, संयमी, पर भावों से निस्पृह जीवन जीने वाला विचारक ही विश्व-अखण्डता को स्थापित कर सकता है।

सम्यक् विचार - 528

वियारधाराए समीकरणं खलु मेत्तीभावं-ठावेदि। मित्तत्ते जादि-वंस-कुल-धम्म-संपदाय-आउ-णाण-दंसण-चारित्त-पहुदीणं ठाणं णत्थि, तत्थ दु वियारधाराए महत्तं भजेदि।।

विचारधारा का समीकरण ही मैत्री भाव को स्थापित करता है। मित्रता में जाति, वंश, कुल, धर्म, सम्प्रदाय, आयु, ज्ञान-दर्शन-चारित्र आदि का स्थान नहीं है, वहाँ तो विचारधारा का महत्त्व होता है।

सम्यक् विचार - 529

जत्थ वियारधारा परोप्परे एयत्तं भजेदि, तत्थेव मेत्तीभावो ठवेदि। बाल-वुड्ढ-जुवाणं-मित्तत्तं वियारधाराए हि होदि।।

जहाँ विचारधारा परस्पर में एकता को प्राप्त होती है, वहीं मैत्रीभाव स्थापित होता है। बाल, वृद्ध, युवा सभी की मित्रता विचारधारा पर ही होती है।

सम्यक् विचार - 530

कुओ एय-वियारधाराए वि सम्मे सदि मित्तत्तं होदि। सयल-वीस-समाय-रज्ज-धम्मिग-संपदायिग-विवत्था इदम्हि सुत्तम्हि आधारिदा। सव्व-वियारेसुं एयत्तं दुल्लहं।।

किसी एक विचारधारा पर भी साम्य होने पर मित्रता हो जाती है। सम्पूर्ण-विश्व, समाज, राज्य, धार्मिक, साम्प्रदायिक व्यवस्था इसी सूत्र पर आधारित है। सर्व-विचारों पर एकता दुर्लभ है।

सम्यक् विचार - 531

मुक्खत्त-गोणत्त-बोहे सदि बंधुत्त-ठावणं होदि। धण्णा धण्णा धण्णा दियंबर-जोईजणा, जे सयलजीवा पडि बंधुत्तभावं धारंति।।

मुख्यता-गौणता का बोध होने पर ही बंधुता की स्थापना होती है। धन्य-धन्य-धन्य दिगम्बर योगीजन जो सर्व-प्राणियों के प्रति बंधुता का भाव रखते हैं।

सम्यक् विचार - 532

वियार-विवरीदत्ते णाणं असम्मं होदि, तत्थ तच्चोवलद्धी वि असंभवा। वियारधाराए णाणधारा गदिमाणा।।

विचारों की विपरीतता में ज्ञान सम्यक् नहीं होता है, वहाँ तत्त्वोपलब्धि भी संभव नहीं है। विचारधारा के अनुसार ज्ञानधारा चलती है।

सम्यक् विचार - 533

जम्हि सम्मचिंतणं, सोचेव वियारो पमाणकोडीए आगच्छेदि। तच्चणाणादो वत्थुत्तचिंतणं होदु। तच्चणाण-सुण्ण-वियारा मेत्तं वियारा हि संति, ते पमाणभूद-वियारो णत्थि। वीसवसुंधराए पमाणं हि पुज्जत्तं भजेदि, अप्पमाणं पुज्जं णत्थि। पत्तेय-विण्ण-मुमुक्खु-पुरिसस्स कत्तव्वं सगीय-वियारं सम्मं धरेदि, जेण लोइग-पारमत्थिग-उहय-ठाणे तुम्हाण वियारा पमाणकोडीए आगच्छेंति। पण्णपुरिसा तुम्हाण वियारेसु वीसासो करेह।।

वही विचार प्रमाण की कोटि में आता है जिसमें सम्यक्-सोच हो, तत्त्वज्ञान पूर्वक वस्तुत्व का चिन्तन हो। तत्त्वज्ञान-शून्य-विचारमात्र विचार ही हैं, वह प्रमाण भूत विचार नहीं हैं। विश्व वसुन्धरा पर प्रमाण ही पूज्यता को प्राप्त है, अप्रमाण पूज्य नहीं होता है। प्रत्येक विज्ञ मुमुक्षु पुरुष का कर्तव्य है वह अपने विचार-सम्यक् रखे जिससे लौकिक एवं पारमार्थिक उभय स्थान पर आपके विचार प्रमाण कोटि में आ सकें। प्रज्ञ पुरुष आपके विचारों पर विश्वास कर सकें।

सम्यक् विचार - 534

विगिद-वियारा असड्ढाणं जम्मेंति, सम्मवियारा सड्ढाणं वड्ढेंति। समीचीण-वियारो सच्चत्थ-बोहगो।।

विकृत विचार अश्रद्धान को जन्म देते हैं, सम्यक्-विचार श्रद्धान को बढ़ाते हैं। समीचीन-विचार सत्यार्थ-बोधक होता है।

सम्यक् विचार - 535

पमाणिद-पुरिसा सग-पमाणिगत्तं अभंग-धारणत्थं सगवियारा विवेयादो पउंजेंति। भासणादो पुव्वं गंभीर-णिण्णयं करेदव्वं।।

प्रमाणित पुरुष स्व-प्रमाणिकता अभंग रखने के लिए स्व-विचारों को विवेकपूर्वक प्रयोग करते हैं। बोलने के पूर्व गंभीर निर्णय करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 536

जं चिंतणं गदिमाणं तं वियारणीयं वा णत्थि इमस्स पुव्वावर-णिण्णयं करेदव्वं। सोचेव वियारो वंजेयव्वो जो हिदयारी हुज्जा। जेण वियारेण विसंवादं वड्ढेहि, आदबलं हासेदि विसुद्धीए हासो होदु तं विमोयणं खलु उचिदं।।

जो चिंतन चल रहा है वह विचारणीय है या नहीं इसका पूर्वापर निर्णय करना चाहिए। वही विचार व्यक्त करना चाहिए जो हितकारी हो। जिस विचार से विसंवाद बढ़े, आत्म-बल घटे, विशुद्धि का ह्रास हो उसे छोड़ देना ही उचित है।

सम्यक् विचार - 537

वीसबंधुत्तं मित्ती वियारेसुं खु णिब्भरं, वियारहीण-परिवारे वि सम्मत्तं णवि कुव्विज्जदे। वियार-पवित्तत्तेणेव एयत्त-अखंडत्त-संती य संभवा।।

विश्व बंधुता मैत्री विचारों पर ही निर्भर होती है, विचारहीन परिवार में भी साम्यता नहीं बना पाता है। विचारों की पवित्रता से ही एकता, अखण्डता और शांति संभव है।

सम्यक् विचार - 538

सम्म-वियारा उण्णदि-हेदवो हुंति एवं असम्मवियारा एयत्तं विभंजित्तु विणासं पडि गच्छेंति, तम्हा वियारं सया पवित्तं कुणेहि।।

सही विचार उन्नति के हेतु बनते हैं और बुरे-विचार एकता को खण्डित कर विनाश की ओर ले जाते हैं, इसीलिए विचार हमेशा पवित्र करो।

सम्यक् विचार - 539

सम्म-वियार-अणुसारेणेव सक्कार-वड्ढी। जीवणधारा वियारेसुं हि पवट्टेदि। विराड-जीवणट्ठं वियारधारा वि विसप्पेदव्वा।।

सम्यक्-विचारों के अनुसार ही संस्कारों में वृद्धि होती है। जीवन की धारा विचारों पर ही प्रवाहित होती है। विराट जीवन के लिए विचारधारा भी विराट् होना चाहिए।

सम्यक् विचार - 540

सव्वस्स दिणाणि एयसदिसाणि ण होंति, सव्वाणि दिणाणि वि एय- सदिसाणि ण होंति, अदो माणवं कुवियारा विरमेत्तु सम्मवियारा एव वियारेदव्वा एवं तेसिं पचलणं कादव्वं।।

सबके दिन एक से नहीं होते, सब दिन भी एक से नहीं होते, अत: मानव को कुविचारों को विराम देकर सम्यक्-विचारों को ही विचारना चाहिए और उनका ही प्रचार-प्रसार करना चाहिए।

सम्यक् विचार - 541

वरेण्ण-चिंतणसील-पण्ण-पुरिसा सम्मवियारा धम्म-सक्किदि-वीस-कल्लाणत्थं दिंतेज्जा। एय-सम्म-वियारो अणेगाणेग-भव्वा सम्म-जागिदीए कारणं हुवेदि।।

श्रेष्ठ चिंतनशील प्रज्ञ-पुरुषों को सम्यक्-विचारों को धर्म-संस्कृति एवं विश्व कल्याण के लिए प्रदान करना चाहिए। एक सम्यक्-विचार अनेकानेक भव्यों को सम्यक्-जागृति का हेतु बनता है।

सम्यक् विचार - 542

सम्मवियाराभावे धम्म-सक्किदि-पयासो असंभवो। सम्मवियार-

सम्यक्-विचारों के अभाव में धर्म, संस्कृति का प्रचार-प्रसार संभव नहीं है। सम्यक्-विचारों के माध्यम से ही धर्म समाज की रक्षा संभव है। विचारों से ही व्यक्ति प्रभावक बनता है।

सम्यक् विचार - 543

सम्म-वियारगो हि वरेण्ण-आयारगो, आयारगो सव्वत्थ पुज्जत्तं पत्तेदि। माणवत्त रक्खणत्थं माणवं सया सम्म-वियार-आलंबणं गेण्हेदव्वं।।

सम्यक्-विचारक ही श्रेष्ठ आचारक बनता है, आचारक सर्वत्र पूज्यता को प्राप्त करता है। मानवता की रक्षा के लिए मानव को हमेशा सम्यक्-विचारों का आलम्बन लेते रहना चाहिए।

सम्यक् विचार - 544

सम्म-वियारगो हि खमासीलो अणुसासिदो दयालू संतोसी पहावसाली जसस्सी जणपियो सव्वपिय-सासगो होदि।।

सम्यक्-विचारक ही क्षमाशील, अनुशासित, दयालु, संतोषी प्रभावशाली, यशस्वी, जनप्रिय और सर्व-प्रिय शासक होता है।

।। इदि अलं ।।

अणुवादग-पसत्थी

सम्म-वियार-गंथस्स किदियारो गणाइरिय-विरागसागरस्स आणाणुवट्टिविणेयो, वत्थुमहाकव्वकत्ता, सुदसंवड्ढगपट्टाइरियो विसुद्धसायरो त्थि। एवं इमस्स गंथस्स संपादणं पाइगमत्तंड-पाइगविज्जाविसणी पाइग-विज्जागुरु-जेट्ठसमणसुदसंवेगी-महासमण-आदिच्चसायरेण किदं। गुरुगुणाणुरायी-दियंबर-समण-सुदप्पिय-अपमिदसायर-मुणिणा गुरुपसाएणं आगमाणुऊलवयणाणि संजोयित्तु अस्स अलोगिग-गंथस्स पाइगाणुवादं किदं।

वीर-णिव्वाणं 2551 विक्कमसंवद 2081 मए माघमासे किण्हपक्खे पंचमीए सोभग्गजोए पुव्वा-फालगुणणक्खत्ते सणिवारे सिरि-मुणिसुव्वयणाह-जिणदेवस्स चरणपादमूले तहा पाइगविज्जा-विसणी-महासमण-आदिच्चसायरस्स एवं सहज-सरल-समण सहजसायर-मुणिस्स साणिज्झे सीहोर-णयरे मंगलाचरणं गंथारंभ च किदं।

अयं गंथो वीरणिव्वाणं 2551 विक्कमसंवद 2081 फालगुणमासे किण्हपक्खे सत्तमी-तिहीए गंडजोए सादी-णक्खत्ते बुधवारे इंदोर-णयरे संपुण्णो।

अस्स गंथस्स पाइगअणुवादं सुद्धाद-बोहट्ठं, जिणसासणस्स अच्छुण्ण-णाण-परंपरा-पवट्टणट्ठं, णियगुण-सुद्धकरणट्ठं च किदं मए। जावं इदं सासय-जीवदव्वं तावं अयं गंथो पुढवीए जयेदु। एवमेव मंगलभावणेण सह गंथस्स पाइग-अणुवादं किदं मए।।

।। णमो बुद्धि-रिसीणं ।।

अनुवादक की प्रशस्ती

सम्यक्-विचार नामक इस ग्रंथ के कृतिकार गणाचार्य विरागसागर जी महाराज के आज्ञानुवर्ती शिष्य, वस्तुत्वमहाकाव्य के कर्त्ता, श्रुतसंवर्धक, पट्टाचार्य विशुद्धसागर जी महाराज हैं। और इस ग्रंथ का संपादन प्राकृतमार्तंड, प्राकृतविद्या व्यसनी, प्राकृतविद्यागुरु, ज्येष्ठ श्रमण, श्रुतसंवेगी महाश्रमण आदित्यसागर जी महाराज ने किया है। गुरुगुणानुरागी दिगंबर श्रमण श्रुतप्रिय अप्रमितसागर मुनि ने गुरुप्रसाद से आगमानुकूल वचनों को संजोकर इस अलौकिक ग्रंथ का प्राकृतानुवाद किया।

वीर निर्वाण 2551 वि.सं. 2081 माघमास में, कृष्ण पक्ष में, पंचमी तिथि, सौभाग्य योग में, पूर्व-फाल्गुन नक्षत्र में, शनिवार के दिन, श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनदेव के चरण पादमूल में तथा प्राकृतविद्या व्यसनी, महाश्रमण आदित्यसागर मुनि एवं सहज सरल श्रमण सहजसागर मुनि के सानिध्य में सीहोर नगर में इस ग्रंथ का मंगलाचरण किया।

यह ग्रंथ वीर निर्वाण 2551 वि.सं. 2081 फाल्गुनमास में, कृष्ण पक्ष में, सप्तमी तिथि, गण्ड योग में, स्वाती नक्षत्र में, बुधवार के दिन, इंदौर नगर में संपूर्ण हुआ।

इस ग्रंथ का प्राकृतानुवाद मैंने शुद्धात्म बोध की प्राप्ति के लिये, जिनशासन की अक्षुण्णज्ञान परंपरा को चलाने के लिये किया है। जब तक यह शाश्वत जीव द्रव्य है, तब तक यह ग्रंथ इस धरा पर यूँ ही जयवंत रहे। इस ही मंगलभावना के साथ प्राकृत अनुवाद किया है।

।। बुद्धि-ऋषियों के लिये नमस्कार हो ।।

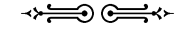

विशुद्धरत्न श्रुतप्रिय मुनि श्री अप्रमितसागर जी द्वारा रचित साहित्य-श्रम

I मौलिक रचना साहित्य—

*** प्राकृत भाषा में**

1. अप्पसारो
2. सम्मग्ग-चिंतणं
3. पणवीस-कल्लाण-भावणा
4. आदणाण-थुदी
5. विसुद्ध-थुदी
6. आदिच्च-थुदी
7. साहु-परमेट्ठि-थुदी
8. अज्झप्प-णीदी

*** संस्कृत भाषा में**

9. विशुद्ध-स्तवनम्
10-12. सुविशुद्धाष्टकं स्तोत्रम् 1,2,3
13. सुगुरुविशुद्ध-स्तवनम्
14. जिनवाणी स्तुतिः
15. श्री जिनचतुर्विंशति स्तोत्रम्

*** हिन्दी भाषा में**

16. वारसाणुवेक्खा
17. आदिनाथ स्तोत्र
18. जिन-जिनवाणी (3000 से अधिक पद्य)
19-21. साधुवचनं (हाईकू)-1,2,3
22. मनन
23. मंथन

24. मर्यादा
25. दशलक्षण
26. परिवर्तन
27. आत्मसृजन
28. सम्बोधन (क्षपक के लिये)
29. शब्द अपने
30. अपनी गूंज
31. अपनत्व
32. अहसास
33. संवेदनसही
34. मेरे गुरु (भाग-1)
35. मेरे गुरु (भाग-2)
36. मेरे गुरु (भाग-3)
37. संस्कार
38. उद्‌बोधन
39. उपदेश
40. उद्‌गार
41. अमृत मार्ग
42. शब्दामृत
43. मेरा जीवन
44. मंतव्य
45. लक्ष्य
46. अप्रमित है अहिंसा
47-51. समझे चेतन-1,2,3,4,5

II अनुवादित रचना साहित्य

प्राकृत भाषा में

52. विसुद्धवयणामिदं
53. तच्चबोहो
54. बोहि-सुत्तं
55. सार-सुत्तं

III संकलित साहित्य

56. व्यसन रहस्य
57. आदित्यवचनं
58. सम्बोधन

IV संपादित साहित्य में

59. भावत्रयफलप्रदर्शी (आ. श्री कुंथुसागर जी कृत)
60. धर्म परीक्षा (आ.श्री अमितगति स्वामी कृत)
61. सच्चत्थ-बोहो (आ. श्री विशुद्धसागर कृत)
62. झाणज्झयण-पाहुड (आ. श्री कुंदकुंदस्वामी कृत)

V श्रुतसंवेगी श्रमण आदित्यसागर जी कृत साहित्य का संपादन

63. वंदना-पथ
64. पुरानी बातें (भाग-1,2,3)
65. जीवन-सूत्र
66. शिक्षा-सूत्र
67. आदिच्च-किरिया-सायरो
68. आदिच्च-किरिया-सायरो
69. अंतर्ध्वनि
70. अंतर्मन की बातें
71. अपने लिये
72. कर्म-रहस्य (भाग- 1,2)
73. संकल्प
74. भक्तामर-विधान
75. आध्यात्मिक-प्रबंधन
76. ॐ Ignoraay नमः
77. घोर Ignoraay नमः
78. गुरु-शिष्य (भाग-1,4)
79. सही बातें (भाग-1-50)
80. जीवन नीति
81. स्तोत्र संग्रह
82. तीर्थंकर-विज्ञान